अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-41, अंक-12, 01-15 फरवरी, 2018

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष का पत्र जिलाधिकारी, वाराणसी के नाम

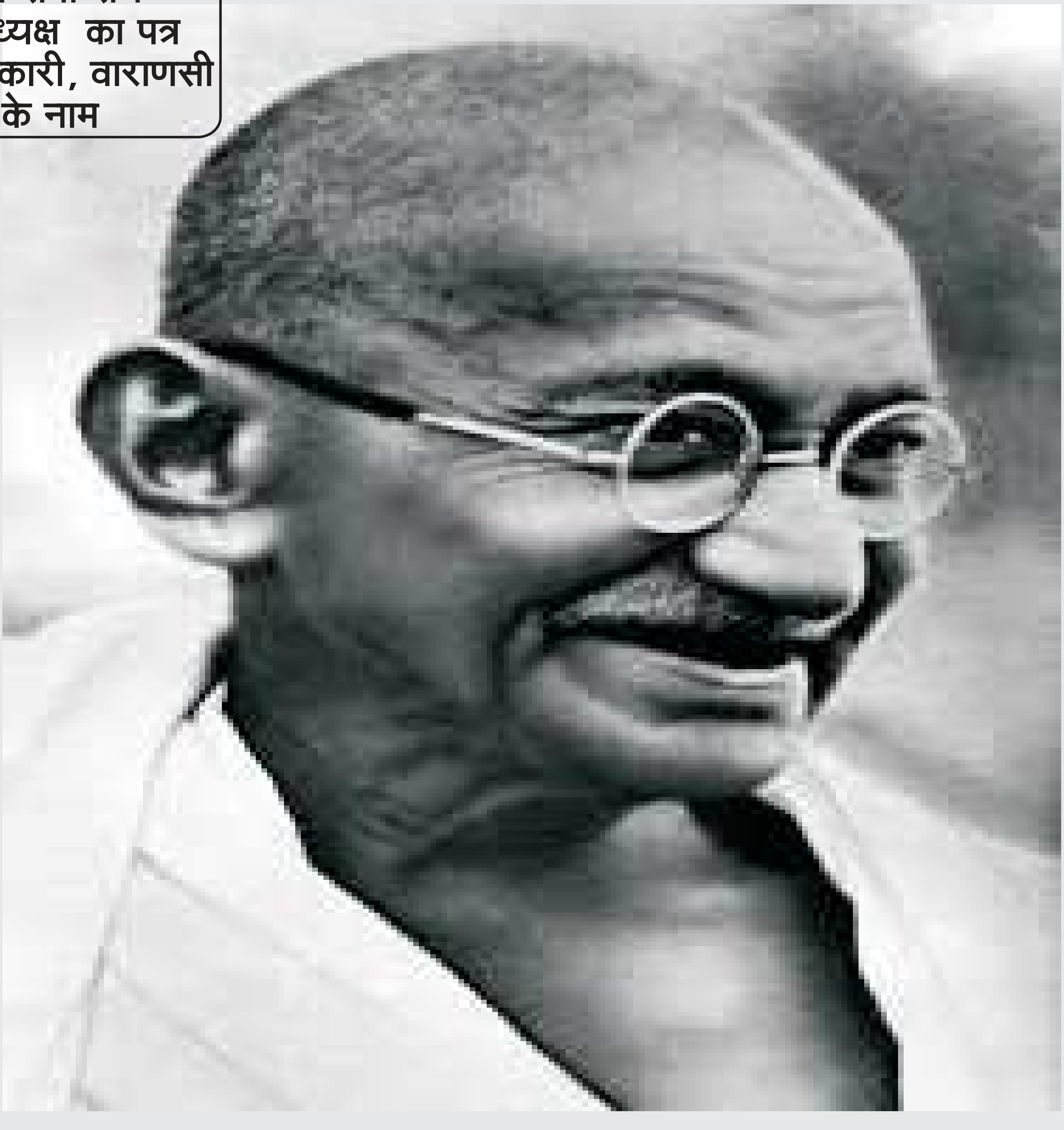

"सत्य के पथ पर चलने में खोना क्या है? बहुत होगा तो कुचले जायेंगे। लेकिन हार जाने से कुचले जाना क्या बेहतर नहीं है?" -गांधी

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 41, अंक : 12, 01-15 फरवरी, 2018

प्रधान संपादक
बिमल कुमार
मो. : 9235772595
संपादक
अशोक मोती
फोन : 9430517733

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	05 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353
Union Bank of India
Rajghat, Varanasi

इस अंक में...

1. चुनौतियां गंभीर हैं... 2
2. अहिंसा की ताकत... 3
3. मेरा तारणहार गांधी... 5
4. गांधी एक अद्‌भुत जीवन कलाधर... 7
5. गांधीजी और आज का भारत... 8
6. बदलाव के लिए सत्याग्रह का धर्म... 10
7. महिला सशक्तीकरण और गांधीजी... 12
8. शेडो बैंकिंग की लंबी काली छाया... 14
9. ईरान का सूफी संत तथा कवि... 15
10. उपन्यास - 'बा'... 17
11. सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष का पत्र... 19

प्रधान संपादक की कलम से...

चुनौतियां गंभीर हैं

गांधी-विचार की हत्या का काम दो स्तरों पर हो रहा है। एक, विकास के नाम पर तमाम कार्यक्रमों को इस रूप में प्रस्तुत करना मानों वे गांधी-विचार के अनुरूप हैं। यह काम इसलिए आसान हो गया है क्योंकि राजनीतिक दलों ने कभी लोकसत्ता निर्माण का कार्य किया नहीं तथा भारत में सभी राजनीतिक दलों के कामों के संयुक्त प्रभाव से लोकसत्ता का दायरा सिकुड़ता गया। जबकि गांधी के मूल कार्य का आधार लोकसत्ता के बिना बन ही नहीं सकता था। लोकसत्ता निर्माण के काम में लगी शक्तियां, इस षड्यंत्र को ठीक से चिन्हित नहीं कर सकीं। इसका फायदा उठाकर राजनीतिक दलों के लोग, गांधीवादियों में अपने 'मित्रों' से जुड़ाव बनाये रखते रहे। आज स्थिति यह है कि सत्ता, और गांधीवादियों में एकता बनी रहे, इसमें रुचि रखने के बजाय, यदि उनमें टूट हो जाये तो अधिक खुश होंगे। इसके लिए गांधी के नाम पर कार्यक्रम चलाने के लिए कुछ चुने हुए गांधीवादियों को आर्थिक सहायता देने की नीति भी रही है। सरकारी सहायता या पूंजीवादी प्रतिष्ठान की सहायता से चलने वाले कार्यक्रमों की रिपोर्टिंग तो बढ़िया हो जाती है, किन्तु उनसे लोकसत्ता का निर्माण नहीं होता है। प्रतीकात्मकता एवं टोकेनिज्म में गांधी-विचार को फंसा लिया जाता है। कार्यकर्ता का योगक्षेम, लोकनिधि से होने के बजाय वित्तीय सहायता पर निर्भर करने लगे तो इसे भटकाव के संकेत के रूप में देखना चाहिए।

दूसरा, यदि इस रास्ते से गांधी-विचार पर चलने वालों को खत्म नहीं किया जा सके, तो बचेखुचों को हर तरह से कमजोर बनाने की रणनीति अपनायी जाती है। आज यह नीति भी प्रकट हो रही है। गांधी के कार्यों को आगे बढ़ाने वाली संस्थाओं के सामने गंभीर संकट पैदा हो गया है। इसका सबसे ताजातरीन उदाहरण सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी है। पहले यहां से चल रहे गांधी विद्या संस्थान, जिसकी स्थापना जेपी ने की थी, उसे खत्म करने का कुचक्र रचा गया। और, अब वहां की संपूर्ण गतिविधियों को खत्म करने का कुचक्र रचा जा रहा है। विकास के नाम पर जल परिवहन, मेट्रो रेल तथा अंतर्प्रान्तीय बस अड्डा बनाने के लिए इस परिसर को खत्म करने का प्रस्ताव है। जबकि यदि प्रशासन चाहे तो अन्यत्र जमीनें उपलब्ध हैं। प्रशासन के पास इस बात का जवाब नहीं है कि इन परियोजनाओं के लिए अन्य कहां-कहां जमीन की तलाश की गयी तथा उनमें क्या अड़चने आयीं। अगर गांधी विद्या संस्थान सत्ता के चहेते लोगों के हाथ में चला गया होता तो, पूरे परिसर पर यह खतरा नहीं आता। किन्तु चूंकि गांधी विद्या संस्थान का मसला माननीय उच्च न्यायालय में लंबित है, और उस पर कब्जा करने का प्रयास करने वालों का पक्ष बहुत कमजोर है, इसलिए अब 'विकास' को माध्यम बनाकर गांधी विचार प्रेरित कार्यों के संचालन की संभावना को जड़ से ही खत्म कर देने का प्रयास है।

यदि सत्ताधारी यहां सफल होते हैं तो उनका अगला कदम सभी गांधी केन्द्रों को कमजोर करने का होगा। 'विकास' के नाम पर अधिग्रहण करना तो एक उपाय है। एक अन्य उपाय यह होगा कि गांधी से जुड़ी सभी संस्थाओं को राष्ट्रीय धरोहर के रूप में सरकार अपने नियंत्रण में ले ले। इसके लिए किसी प्राधिकरण का भी निर्माण किया जा सकता है। हम जानते हैं कि गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति तथा खादी ग्रामोद्योग आयोग सरकारी नियंत्रण में ही चल रहे हैं।

ये प्रक्रियाएं चल रही हैं। ऐसे में संघर्षशील व अहिंसक क्रांति के प्रति प्रतिबद्ध गांधी विचार को मानने वाली सभी शक्तियों को, अपने सभी पूर्वाग्रह छोड़कर एक होना होगा। गांधी के विचारों के आधार पर भावी आंदोलन की रणनीति बनानी होगी तथा लोकसत्ता के दायरे को बढ़ाने के कार्य को नयी गति देनी होगी। गांधीवादी संस्थाएं सत्याग्रह एवं रचनात्मक कार्यक्रमों की प्रयोगस्थली बनेगी, तभी उनकी सार्थकता प्रकट होगी।

'बा-बापू 150' के कार्यक्रम को भी प्रतीकात्मकता से बाहर लाकर संघर्ष के नये फेज के रूप में संचालित करना होगा। हम अपना कार्य करें, दृढ़ता से करें, तभी विरोध के स्वर परिवर्तन का माध्यम बनेंगे। बिमल कुमार

अहिंसा की ताकत

❑ महात्मा गांधी

अहिंसक सेनापति में हिंसक सेनापति की अपेक्षा अधिक तीव्र बुद्धि और समय की पहचान होनी चाहिए। लेकिन वह पहले से ही पूरा चित्र खींच सके, इतनी शक्ति उसे ईश्वर दे देगा तो वह अभिमानी बन जायेगा। और ईश्वर इतना कृपण है कि आवश्यकता से अधिक शक्ति मनुष्य को देता ही नहीं है।

× × ×

सत्य के पथ पर चलने में खोना क्या है? बहुत होगा तो कुचले जायेंगे। लेकिन हार जाने से कुचले जाना क्या बेहतर नहीं है?

आपने एक बार लिखा था कि जर्मनी के विरुद्ध पोल लोगों ने जो प्रतिकार किया उसे लगभग अहिंसक कहा जा सकता है।

कोई अकेला व्यक्ति सैकड़ों सशस्त्र डाकुओं से जूझते हुए तलवार चलाये तो उसके लिए मैं यही कहूंगा कि उसने लगभग अहिंसा का पालन किया। स्त्रियों से तो मैं कह ही चुका हूं कि अपनी शील-रक्षा करते हुए वे नाखूनों का उपयोग करें या दांतों का, बल्कि भाले का भी इस्तेमाल करें तो भी उनके आचरण को मैं अहिंसक ही कहूंगा। कारण, हिंसा के लिए उनकी कोई तैयारी नहीं थी। हिंसा-अहिंसा का भेद वे समझती हैं। लेकिन तत्काल जो सूझा वही करके वे अपने शील की रक्षा करती हैं। मान लीजिए, कोई चूहा बिल्ली के हमले का मुकाबला करते हुए अपने नुकीले दांतों का उपयोग करता है तो क्या हम उसे हिंसक कहेंगे? इसी अर्थ में मैंने पोल लोगों के लिए उस वाक्य का उपयोग किया था। संख्या-बल में अपने से कई गुनी अधिक और अनेक गुनी सुसज्जित जर्मन वाहिनी का शूर-वीरों की तरह सामना करने में पोल लोगों ने लगभग अहिंसा से काम नहीं लिया तो और क्या किया? अपनी उस बात पर मैं आज भी कायम हूं और भविष्य में भी रहूंगा। 'लगभग' का पूरा भाव आपको समझना चाहिए।

लेकिन हम तो यहां 40 करोड़ हैं। हममें थोड़ा-सा भी सहयोग हो तो हम दुश्मन से टक्कर ले सकते हैं। हम विशाल सेना खड़ी करके, लड़ने को तैयार हो जायें तो उसे 'लगभग' अहिंसा कैसे कहा जा सकता है? पोल लोगों को खबर भी नहीं थी कि किस रीति से जर्मन वाहिनी उन पर टूट पड़ेगी। हम जब शस्त्रास्त्रों की तैयारी की बात करते हैं तब हमारा हेतु यह होता है कि चाहे जितना शक्तिशाली शत्रु आ जाये, उसे उसकी अपेक्षा अधिक शक्तिशाली सेना से परास्त करेंगे। अगर हिन्दुस्तान ऐसी तैयारी करता है तो वह दुनिया के लिए एक मुसीबत बन जायेगा। यह तो हिंसा की पराकाष्ठा होगी। जिस प्रकार यूरोप ने दूसरे देशों को चूसने के तौर-तरीके को स्वीकार किया है, उसी प्रकार हम भी उसे स्वीकार कर लेंगे और जगत् का संहार करने के पैरोकार बन जायेंगे।

आपको शासन का संचालन करना हो तो अहिंसा के सहारे कैसे करेंगे?

आप यह समझ रहे हैं न कि इस सवाल में आपने एक बात स्वीकार कर ली है? अगर हमने अहिंसक रीति से स्वराज्य प्राप्त किया होगा तो इसका अर्थ यह होगा कि हम पूरी तरह अहिंसक हो गये हैं और हमारा देश अहिंसक रीति से संगठित हो गया है। इसलिए अगर हमने स्वराज्य प्राप्त करने योग्य अहिंसक तैयारी की होगी तो अहिंसक रीति से उसकी रक्षा करने में भी कठिनाई नहीं होनी चाहिए। कारण, अहिंसक स्वराज्य कोई ऊपर से टपक पड़ने वाली चीज नहीं होगी। वह तो हमें लोगों के बहुमत का साथ मिलने का ही पणिमाम होगा। अगर हमें ऐसा स्वराज्य मिले तो इसका अर्थ यह होगा कि गुंडे भी हमारे अंकुश में आ गये हैं। उदाहरण के लिए, अगर सेवाग्राम की सात सौ की बस्ती में पांच-सात गुंडे हों और बाकी के लोगों को अहिंसा का प्रशिक्षण प्राप्त हो तो वे गुंडे या तो बाकी के लोगों का अंकुश स्वीकार करेंगे या गांव छोड़कर चले जायेंगे।

लेकिन आप देखेंगे कि इस प्रश्न की मैं बड़ी सावधानी से चर्चा कर रहा हूं। मेरी सत्य की भावना मुझे यह कहने को प्रेरित करती है कि हम शायद पुलिस के बिना अपना काम न चला सकें। इसका परिणाम यह निकलता है कि अगर फिर बालासाहब के हाथ में शासन आये तो वे पुलिस का उपयोग तो करेंगे, लेकिन सेना का विचार तक नहीं करेंगे। और पुलिस भी जैसी अंग्रेज शासक रखते हैं वैसी नहीं, बल्कि अपने नये ढंग की होगी। फिर, हमारी कल्पना के अनुरूप वयस्क मताधिकार होगा, इसलिए 21 वर्ष के युवा का भी राज-काज में हिस्सा होगा। इसीलिए मैंने कहा है कि पूर्ण अहिंसक राज्य तो राजा के बिना भी व्यवस्थित ही रहेगा। इसलिए इसमें पुलिस आदि की व्यवस्था

कम-से-कम हो, वही राज्य उत्तम होगा। लेकिन बात यह है कि राज्य की लगाम मेरे हाथ में सौंप कौन रहा है? सौंपे तो मैं राज्य चलाकर दिखा दूं! मैं पुलिस रखूंगा तो वह कांग्रेस में से लिये गये समाज-सुधारकों की समूह होगी।

लेकिन सत्ता तो आपके पास थी न?

थी तो, लेकिन वह तो कागज की नाव थी। और आप यह न भूलें कि तब भी कांग्रेसी मंत्रियों की आलोचना मैं करता ही रहता था। मुंशीजी और पंतजी पर मैंने कितनी ही बार प्रहार किये हैं। सच बात यह है कि हमने आशा की थी कि हम धीरे-धीरे अहिंसा को प्राप्त कर लेंगे। जैसे नाले का पानी गंगा में मिलकर गंगाजल-जैसा पवित्र हो जाता है उसी प्रकार अहिंसक कांग्रेस के शासन के नीचे आकर गुंडा भी सज्जन बन जायेगा, ऐसी आशा हमने की थी। लेकिन हमारे मंत्रियों में गंगाजल की तरह दूसरों को भी पावन बनाने वाला पवित्र प्रभाव आया ही नहीं था।

क्या यह समझायेंगे कि बाहरी आक्रमण का मुकाबला आप अहिंसक रीति से कैसे करेंगे?

इसकी पूरी तस्वीर मैं आपके सामने पेश नहीं कर सकता, क्योंकि हमारे पास पूर्व अनुभव नहीं है, और आज आक्रमण का सामना करने का प्रसंग भी बिलकुल सामने नहीं है। फिर, आज तो सिखों, गोरखों और पठानों की सरकारी सेना पड़ी हुई ही है। मेरी कल्पना यह है कि मैं अपनी हजार-दो-हजार की अहिंसक सेना आपस में जूझ रही दोनों सेनाओं के बीच झोंक दूं। ऐसा करके मैं और कुछ हासिल न भी कर पाऊं, लेकिन शत्रु की हिंसा का प्रमाण तो जरूर कम कर दूंगा।

कल्पना तो बहुत की जा सकती है। लेकिन कल्पना किसलिए करें? मुद्दे की बात यह है कि अहिंसक सेना के सेनापति को ईश्वर प्रत्येक परिस्थिति का मुकाबला करने का बुद्धियोग दे ही देता है। कारण, अहिंसक सेनापति में हिंसक सेनापति की अपेक्षा अधिक तीव्र बुद्धि और समय की पहचान होनी चाहिए। लेकिन वह पहले से ही पूरा चित्र खींच सके, इतनी शक्ति उसे ईश्वर दे देगा तो वह अभिमानी बन जायेगा। और ईश्वर इतना कृपण है कि आवश्यकता से अधिक शक्ति मनुष्य को देता ही नहीं है।

सारा संसार द्वंद्वमय है–हर्ष-शोक, सुख-दुःख, भय-साहस! जहां भय होगा वहां साहस भी आयेगा ही। लेकिन भय कोई व्यर्थ चीज नहीं है। पहाड़ पर डर मानकर न चलें तो कहीं घाटी में जा गिरेंगे। तो क्या आपकी अहिंसक सेना द्वंद्वातीत होगी, गुणातीत होगी?

नहीं, जरा भी नहीं! कारण, मेरी सेना भी द्वंद्व में से ही एक का—अहिंसा का—वरण करने वाली होगी। मैं या मेरे सैनिक न केवल द्वंद्वातीत नहीं, बल्कि त्रिगुणातीत भी होंगे। गीता का त्रिगुणातीत तो हिंसा-अहिंसा दोनों से परे होता है। डर का उपयोग है, लेकिन डरपोकपन का नहीं। डर से मैं सांप के मुंह में उंगली नहीं दूंगा, लेकिन डरपोकपन दिखाकर मैं सांप से दूर नहीं भाग जाऊंगा। बात यह है कि हम तो मृत्यु के आने से पहले ही अनेक बार मरते हैं। डर तो सिर्फ ईश्वर का ही हो सकता है।

लेकिन मेरी सेना कैसी होगी, यह मैं समझता हूं। इन सभी सैनिकों में सेनापति की बुद्धि होगी, ऐसी कल्पना तो नहीं है, लेकिन इन सबमें सेनापति के एक-एक आदेश का पालन करने की निष्ठा और अनुशासन अवश्य होगा। सेनापति में ऐसा गुण अवश्य होना चाहिए जिसके कारण सब उसका हुक्म मानें। लाखों के दल से तो वह केवल आज्ञा-पालन की ही मांग करेगा। दांडी-कूच केवल मेरी कल्पना थी। पहले तो मोतीलालजी ने उसका मजाक उड़ाया, और जमनालालजी ने भी कहा कि इससे तो अच्छा है कि हम वाइसराय के महल पर कूच करें। लेकिन मुझे तो नमक के सिवाय कुछ सूझता ही नहीं था। कारण, मुझे करोड़ों का विचार करके निर्णय करना था। यह कल्पना ईश्वर-प्रदत्त थी। पंडित मोतीलालजी ने थोड़ी दलील की, लेकिन अंत में कहा : आप सरदार हैं, इसलिए आप जो कल्पना करें सो ठीक, उसमें मैं कोई परिवर्तन नहीं सुझा सकता, मुझे विश्वास रखना है। उसके बाद जब वे जंबुसर में मुझसे मिलने आये तब उनकी आंखें खुल गयीं। लोगों में उन्होंने जो जागृति देखी उससे वे चकित रह गये। और वह कैसी जागृति थी! हजारों स्त्रियों ने जिस शांत साहस का परिचय दिया था उसका दूसरा उदाहरण क्या इतिहास में मिलेगा?

और यह सब तब हुआ जब सत्याग्रह में भाग लेने वाले हजारों लोग कोई असाधारण मनुष्य नहीं थे। उनमें से बहुत-से व्यसनी और भूल करने वाले रहे होंगे। लेकिन ईश्वर को तो जो कच्चा-पक्का साधन मिलता है उसका उपयोग कर लेता है और खुद अलिप्त रहता है क्योंकि वही ऐसा गुणातीत है।

मैं कोई संसार से विरक्त नहीं हो गया हूं, होना भी नहीं चाहता। ऐसा कोई विरक्त मैंने देखा भी नहीं। मैं तो सेवाग्राम में रहकर जो-कुछ काम कर सकता हूं उतना करके और जो मेरी सलाह लेने आयें उन्हें सलाह देकर संतोष मानता हूं। बात यह है कि हम लोगों को श्रद्धा की जरूरत है। और सत्य के पथ पर चलने में खोना क्या है? बहुत होगा तो कुचले जायेंगे। लेकिन हार जाने से कुचले जाना क्या बेहतर नहीं है?

लेकिन अगर हिंसक तैयारी करनी हो तब तो मेरी बुद्धि कुंठित हो जायेगी। यह हवाई जहाजों, टैंकों आदि की तैयारी का विचार करते ही मुझे चक्कर आने लगता है। इसके मुकाबले मेरी अहिंसक तैयारी तो इतनी आसान है कि पूछिए मत! और फिर उसमें हमें ईश्वर-जैसा सारथी मिला है, जो हमें कभी उलटी राह ले ही नहीं जा सकता। फिर डरने की क्या बात है! ❑

सत्याग्रह-आश्रम

मेरा तारणहार गांधी

❑ विनोबा

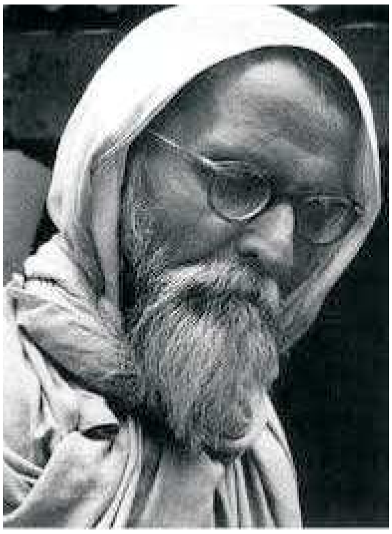

मुझे लगा, यह पुरुष ऐसा है, जो देश की राजनैतिक स्वतंत्रता और आध्यात्मिक विकास दोनों साथ-साथ साधना चाहता है। मुझे यही पसंद था। बापू ने लिखा था, 'तुम यहीं चले आओ।' और मैं बापू के पास पहुंच गया।

छोटा था, तभी से मेरा ध्यान बंगाल और हिमालय की ओर खिंचा हुआ था। मैं हिमालय और बंगाल जाने के सपने संजोया करता था। एक ओर बंगाल की 'वंदेमातरम्' की क्रांति की भावना मुझे खींचती तो दूसरी ओर हिमालय का ज्ञानयोग मुझे खींचता। हिमालय और बंगाल, दोनों के रास्ते में काशी नगरी पड़ती थी। कर्मसंयोग से मैं वहां आ पहुंचा था। पर न मैं हिमालय गया, न बंगाल ही। लेकिन अपने मन से दोनों जगह एक साथ पहुंच गया। मैं गांधीजी के पास गया और उनके पास मुझे हिमालय की शांति और बंगाल की क्रांति मिली। वहां जो पाया, उसमें क्रांति और शांति, दोनों का अपूर्व संगम था।

जब मैं काशी आया तो वहां बापू के एक व्याख्यान की चर्चा चली थी। वहां के हिन्दू विश्वविद्यालय में बापू का यह व्याख्यान हुआ था। मुख्य बात यह थी कि निर्भयता के बिना अहिंसा चल ही नहीं सकती। मन-ही-मन हिंसा का भाव रखने की अपेक्षा खुलकर हिंसा की जाये तो भी वह कम ही हिंसा मानी जायेगी। यानी मानसिक अहिंसा ही मुख्य अहिंसा है और वह बिना निर्भयता के आ नहीं सकती। उस भाषण में उन्होंने उन राजा-महाराजाओं की भी कसकर आलोचना की थी, जो तरह-तरह के आभूषणों से सजकर आये थे। मैं वहां पहुंचा तब इस ऐतिहासिक व्याख्यान को एक महीना हो चुका था, फिर भी नगर में उसकी शोहरत थी। जब मैंने वह व्याख्यान पढ़ा तो कितनी ही शंकाएं और जिज्ञासाएं उठ खड़ी हुईं। इसलिए मैंने बापू के नाम पत्र लिखा, जिसमें अपनी जिज्ञासाएं उनके समक्ष प्रस्तुत की थीं। उन्होंने उस पत्र का मुझे बहुत ही अच्छा जवाब दिया।

दस-पन्द्रह दिनों के बाद मैंने पुनः उनसे शंकाएं पूछीं। तब उनका एक कार्ड आया कि अहिंसा के बारे में जो जिज्ञासाएं की हैं, उनका समाधान पत्राचार से नहीं हो सकता। उसके लिए जीवन से ही स्पर्श होना चाहिए। इसलिए कुछ दिन के लिए मेरे पास आश्रम में आइए और रहिए तो धीरे-धीरे बातचीत हो सकती है। उनका यह जवाब कि "समाधान बातों से नहीं, जीवन से होगा" मुझे जंच गया।

उस जवाब के साथ बापू ने आश्रम का एक नियम-पत्रक भी भेजा था, जो मेरे लिए और भी आकर्षक था। उस समय तक किसी भी संस्था का वैसा पत्रक मेरे पढ़ने में कभी नहीं आया था। उसमें लिखा था—'इस आश्रम का ध्येय विश्वहित-अविरोधी देशसेवा है और उसके लिए हम निम्नलिखित व्रत आवश्यक मानते हैं।' नीचे सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्तेय, अपरिहग्रह, शरीरश्रम आदि एकादश-व्रतों के नाम लिखे थे। मुझे यह बहुत ही आश्चर्यकारक लगा। मैंने बहुत-से इतिहास पढ़े, पर कहीं भी यह देखने को नहीं मिला कि देश के उद्धार के लिए व्रतों का विधान आवश्यक माना गया हो। ये सारी बातें योगशास्त्र में, धर्मग्रंथ में, भक्तिमार्ग में आती हैं, लेकिन देशसेवा के लिए भी आवश्यक होती हैं, यह बात उस पत्रक में थी। इसलिए मेरा मन उसकी ओर आकृष्ट हो गया। मुझे लगा, यह पुरुष ऐसा है, जो देश की राजनैतिक स्वतंत्रता और आध्यात्मिक विकास दोनों साथ-साथ साधना चाहता है। मुझे यही पसंद था। बापू ने लिखा था, 'तुम यहीं चले आओ।' और मैं बापू के पास पहुंच गया।

वह दिन था 7 जून, 1916। मैं अहमदाबाद स्टेशन पर उतरा। मेरे पास बहुत सामान तो था नहीं, खुद ही उठा लिया और रास्ता पूछते-पूछते ही चल पड़ा। एलिन ब्रिज के रास्ते से चलकर सुबह आठ बजे (कोचरब) आश्रम पहुंचा। बापू को खबर पहुंचायी गयी कि एक नये भाई आये हैं। उन्होंने कहा, ठीक है, नहा-धोकर मुझसे मिलने आयें। नहा-धोकर मैं उनके पास पहुंच गया। वे सब्जी काट रहे थे। मेरे लिए यह भी एक नया ही दृश्य था। सब्जी काटने-बनाने का काम भी राष्ट्रनेता करते हैं, यह मैंने कभी सुना नहीं था। उनके प्रथम दर्शन में ही मुझे श्रम का पाठ मिला। बापू ने एक चाकू मेरे हाथ में भी दे दिया। मैंने तो उससे पहले कभी यह काम किया नहीं था। पर उस दिन पाठ मिला। मेरी यह प्रथम दीक्षा थी, जो वहां मिली।...

बापू ने मुझे गढ़ने का तय ही कर डाला था। लोगों को मेरे पास भेजते। वर्धा जाने के बाद, सेवाग्राम में जो भी जिज्ञासु आता, उसे बापू पूछते कि आप विनोबा मिल आये? न मिले हों तो जरूर मिल लेना चाहिए। एक दिन बापू ने एक भाई को मेरे पास भेजा। वे भारत के एक प्रख्यात क्रांतिकारी थे। बापू ने कहा था इसलिए वे पैदल चलकर पवनार तक आये थे। मैं खेत में खोद रहा था। नजर उठाकर देखता हूं तो ये भाई सामने खड़े हैं। मैंने पूछा, कैसे आना हुआ? उन्होंने जवाब दिया, ऐसे ही। दर्शन करने आया हूं। फिर

क्या? दूसरी कोई बातचीत नहीं हुई। कुछ ही देर में मेरे हाथ पुनः काम में लग गये। नजर काम पर चली गयी। वे भाई खड़े रहे, पर कुछ बोले नहीं। वापस जाकर उन्होंने बापू से शिकायत की कि आपने मुझे कैसे आदमी के पास भेज दिया। मेरे साथ उसने कोई बात तक नहीं की। बापू समझ गये। बोले, आप गये तब वह क्या करता था? जमीन खोद रहे थे। तब बापू बोले, तो फिर उसमें नाराज होने की क्या बात है? विनोबा अपना काम कर रहा था, तब वह आपके साथ बोलता कैसे? आपको पता नहीं कि किसी से मिलने जाना हो, तो पहले से समय मांग लेना चाहिए। इस प्रकार बापू ने उनको तो समझा दिया, लेकिन बाद में जब मुझसे मिले तो मुझे फटकारा कि भले आदमी, कोई आता है तो उससे मिलना और उसके साथ बातचीत करना भी एक प्रकार का काम ही है। इस तरह उनके हाथों में धीरे-धीरे गढ़ा गया हूं। मैं स्वभाव से एक जंगली जानवर जैसा रहा हूं। बापू ने मुझे पालतू जंगली जानवर बनाया। उनके चरणों में बैठकर ही मैं असभ्य मनुष्य से सेवक बना रहूं। बापू के साथ रहकर मुझे ऐसा की लगन लगी। मैं सेवा को भगवान की पूजा का साधन और जनता को अपना स्वामी मानता हूं।

बापू ने मेरी कसौटी की होगी या नहीं, मैं नहीं जानता। लेकिन अपनी बुद्धि से मैंने उनकी बहुत परीक्षा कर ली थी। और यदि उस परीक्षा में वे कम उतरते तो उनके पास मैं टिक नहीं पाता। मेरी परीक्षा करे उन्होंने मुझमें चाहे जितनी खामियां देखी होंगी या देखते होंगे, तो भी वे मुझे अपने साथ रखते थे। परंतु अगर मुझे उनकी सत्यनिष्ठा में कुछ भी कमी, न्यूनता या खामीदिखती तो मैं उनके पास टिक नहीं पाता। मैंने ऐसे बहुत-से महापुरुष देखे हैं, जिन्हें अपने बारे में ऐसा भास होता है कि वे मुक्त पुरुष हैं, पूर्ण पुरुष हैं। फिर भी ऐसे किसी का मुझे आकर्षण नहीं हुआ। लेकिन सदैव अपने को अपूर्ण मानने वाले बापू का ही मुझे अनोखा आकर्षण रहा। वे हमेशा कहते थे कि मैं अभी पूर्ण सत्य से बहुत दूर हूं। मुझ पर जितना असर बापू का पड़ा, उतना पूर्णता का दावा करने वाले दूसरे सज्जनों का नहीं पड़ा।

मैं बापू से मिला और उन पर मुग्ध हो गया, वह उनकी अंतबार्ह्य एकता की अवस्था के कारण। फिर, कर्मयोग की दीक्षा तो मुझे बापू से ही मिली। गीता में तो वह कहा ही है, पर उसका साक्षात्कार हुआ बापू के जीवन में गीता के कर्मयोग का प्रत्यक्ष आचरण मैंने बापू में देखा। गीता में स्थितप्रज्ञ-लक्षण आते हैं। यह वर्णन जिसको लागू हो ऐसा स्थितप्रज्ञ देहधारी खोजने पर बड़े भाग्य से ही मिलेगा। लेकिन इन लक्षणों के निकट पहुंचे महापुरुष को मैंने अपनी आंखों से देखा।

बापू के पास आश्रम का जो कुछ जीवन-स्वरूप अपनी दृष्टि से देखा, उससे मुझे बहुत कुछ मिला। कई नयी चीजें मिलीं। खास करके जीवन के मूलभूत तत्त्वों पर श्रद्धा—'अॅब्सोल्यूट मॉरल व्हॅल्यूज' के बारे में साफ दृष्टि मिली। मैं सत्यादि धर्म मानता था, लेकिन ये 'रिलेटिव' (सापेक्ष) हैं, परिस्थिति पर निर्भर हैं, ऐसा मेरा चिन्तन था। बापू के पास आने के बाद खास बात हुई कि उसमें फरक हुआ। दुनिया भर की चीजें हमारे लिए हैं, हम उनके लिए नहीं, वैसा जीवन सिद्धांत के लिए नहीं हो सकता। जीवन सिद्धांत हमारे लिए हैं, ऐसा नहीं, हम ही उनके लिए हैं। शास्त्रग्रंथों में भी यह बात मिलती है। जैसे शास्त्र में है कि ब्राह्मण धर्म के लिए पैदा हुआ। अभी हम ब्राह्मण-क्षत्रियादि पद्धति से सोचते नहीं, साधक के लिए सोचते हैं। लेकिन उसका अर्थ यह है कि हम धर्म के लिए हैं, हम धर्म के सेवक हैं। सिद्धांत हमारे लिए नहीं, हम सिद्धांतों के लिए हैं, यह बात ध्यान में आयी। परिणाम स्वरूप मुझे अनुभव हुआ कि जीवन एकरस और अखंड है। बापू कभी अपने को गुरु के तौर पर नहीं मानते थे और अपने को किसी के शिष्य के तौर पर भी नहीं मानते थे। इसी तरह मैं भी न किसी का गुरु हूं, न किसी का शिष्य; यद्यपि मैं गुरु के महत्त्व को बहुत मानता हूं। लेकिन गुरुत्व की यह भाषा छोड़कर मैं इतना ही कहूंगा कि मुझे बापू के आश्रय में जो कुछ मिला, वही अब तक मेरे काम में आ रहा है। बापू का आश्रय मेरे लिए दृष्टिदायी मातृस्थान है।

एक बार बापू से बातें हो रही थीं। खान अब्दुल गफ्फार खां की मदद में जाने की बात चल रही थी। तब उन्हें लगा कि ऐसा भी हो सकता है कि वापस लौटना न हो। इसलिए उन्होंने मुझे बात करने के लिए बुलाया। लगभग 15 दिन तक हमारी बातें चलीं। दो-तीन दिन तो वे सवाल पूछते गये और मैं जवाब देता गया। फिर एक दिन मैंने उनसे ईश्वरविषयक अनुभव के बारे में पूछा। मैं हा, ''आप 'सत्य ही परमेश्वर है' कहते हैं। सो तो ठीक है, लेकिन उपवास के समय आपने कहा था कि आपको अंदर की आवाज सुनाई दी है, यह क्या बात है? इसमें कोई रहस्य-गूढ़ता है?''

उन्होंने जवाब दिया, ''हां, इसमें कुछ ऐसा है जरूर। यह साधारण बात नहीं। मुझे आवाज साफ-साफ सुनायी दी थी। मैंने पूछा, मुझे क्या करना चाहिए। तो जवाब मिला, उपवास करना चाहिए। मैंने पूछा, कितने उपवास करने चाहिए? जवाब था, इक्कीस।''

इसमें एक शख्स पूछने वाला था और दूसरा जवाब देने वाला था। यानी बिल्कुल कृष्णार्जुन-संवाद ही था। बापू तो सत्यवादी थे, इस वास्ते यह कोई भ्रम तो हो नहीं सकता। उन्होंने कहा कि साक्षात् ईश्वर ने मुझसे बात की। इसलिए फिर मैंने पूछा, ''ईश्वर का कोई रूप हो सकता है?''

उन्होंने कहा, ''रूप तो नहीं हो सकता, लेकिन मुझे आवाज सुनायी दी थी।'' मैंने कहा, यह कैसे? रूप अनित्य है तो आवाज भी अनित्य है फिर भी आवाज सुनायी देती है, तो फिर रूप क्यों नहीं दिखता? फिर मैंने उनसे दुनिया में दूसरों को हुए ऐसे गूढ़ अनुभव की बातें कहीं। अपने भी कुछ अनुभव कहे। ईश्वर-दर्शन क्यों नहीं होता, इस बारे में भी बातें हुईं। आखिर उन्होंने→

गांधी एक अद्‌भुत जीवन-कलाधर

❑ काका कालेलकर

पहले मैंने गांधीजी का कुछ साहित्य ही पढ़ा था। उससे मन पर जो छाप पड़ी थी, व रूबरू मुलाकात में दृढ़ बन गयी कि यह आदमी जीवन के सब अंग-उपांगों पर, पहलुओं पर, गहराई से सोचने वाला एक विज्ञानशास्त्री, साइंटिस्ट है। संभाषण में और चर्चा पर से मालूम हुआ कि इस आदमी का तर्कशास्त्र भी बहुत ही तेज है। अनुमान निकालने में कहीं गलती न हो जाय, इसके बारे में उनकी जागृति उनकी सत्यनिष्ठा में से ही पैदा हुई है। हेत्वाभास को पकड़ लेने की उनकी कला भी उत्तम है। लेकिन उपहास करके दूसरे को अपमानित करने की तार्किकों की वृत्ति का उनमें संपूर्ण अभाव है।

आठ दिन तक मैंने उनके साथ हुज्जत चलायी। जी, हुज्जत शब्द ही ठीक है। और फिर यकीन हो गया—यकीन सिर्फ हुज्जत के कारण नहीं हुआ, बल्कि उनकी बातचीत, बर्ताव, उठना-बैठना, खानपान सबका निरीक्षण करने के बाद यकीन हो गया कि यह आदमी युग-पुरुष है। और इसीलिए व्यापक अर्थ में जीवन-कलाधर है। मैं जानता था कि गांधीजी राजनीतिक पुरुष हैं, तत्त्वज्ञानी हैं, धर्म-जिज्ञासु हैं, लोकनेता हैं और सनकी भी हैं। लेकिन उस पहली मुलाकात में सबसे अधिक यकीन अगर किसी बात का हुआ हो तो वह यह कि गांधीजी इस युग के सबसे लोकोत्तर जीवन-कलाधर हैं। कलाधर के जीवन में संगीत होना चाहिए, सामंजस्य होना चाहिए, प्रमाणबद्धता होनी चाहिए, व्याकरण तो होना ही चाहिए। हरएक के साथ बातचीत करते, अपना काम करते, मुंह धोते, सब्जी काटते, कपड़ों की तह करते—हरएक बात में उनका तरीका, उनकी सफाई की आदत और जरूरत से अधिक समय यह महत्त्व न देने की उनकी प्रमाणबद्धता, यह सब देखकर मेरी अभिरुचि आकंठ तृप्त हुई।

गांधीजी से मैं कविवर रवीन्द्रनाथ के शांतिनिकेतन में मिला था। नंदलाल बोस और असितकुमार हलदार जैसे कलाकारों के सहवास में मेरे दिन गुजर रहे थे। बंगाली संगीत मैं जी भरकर सुनता था। कलानंद के सेवन की मेरी भूख अतृप्त नहीं थी। फिर भी गांधीजी को देखते ही उनके बारे में असाधारण कलात्मक आकर्षण अनुभव करने लगा। उनकी नाक, उनके कान या उनका उस समय का चेहरा वैसे कुछ खास सुंदर नहीं था। गणेशजी के जैसे उनके कान और उनके छेद, बंगाली शब्दों में कहें तो, सबकुछ 'विश्री' था। लेकिन व्यक्तित्व? उनके व्यक्तित्व की मोहिनी सर्वोच्च कलाभिरुचि को संतोष प्रदान करने वाली थी। केवल संतोष प्रदान करके रुकने वाली नहीं, बल्कि लेने वाले की क्षमता के अनुसार उतने प्रमाण में दीक्षा देने वाली भी।

और इसीलिए अपने इर्द-गिर्द इकट्ठा होने वाले लोगों के जीवन बनाने की कला उनको अच्छी तरह विदित थी, साध्य थी। किन-किन व्यक्तियों ने अधिक से अधिक कितने आदमियों के जीवन बनाये और कैसे उत्तम बनाये, इसकी सूची अगर किसी इतिहासकार ने बनायी, तो मैं मानता हूं कि गांधीजी का नाम उसमें असंख्य स्थानों में आयेगा।

सच्चा जीवन-कलाकार हरएक वस्तु और के अंदर की आत्मा को पकड़ लेता है। गांधीजी जैसा चतुर बनिया और निपुण बैरिस्टर तो लोगों के गुणदोष आसानी से पकड़ पायेगा। उसमें कोई विशेष बात नहीं। लेकिन हरएक आदमी कहां तक चढ़ सकेगा, इसका अंदाज उस आदमी की अपेक्षा गांधीजी को अधिक रहता था। और इसीलिए गांधीजी मिट्टी के ढेलों में से शूरवीर और उत्तम देशभक्त और साधना-वीर तैयार कर सके। अगर एक ही वाक्य में गांधीजी का वर्णन करने के लिए मुझसे कहा जाय, तो मैं कहूंगा कि यह महात्मा मानवता का गढ़िया, बनाने वाला था। यही है मेरे हृदय पर अंकित उनकी प्रधान पदमुद्रा। *14.10.1958* ❑

→स्वीकार किया कि यद्यपि मुझे आवाज सुनायी दी, रूप का दर्शन नहीं हुआ, वह हो सकता है।

जब बापू की आत्मकथा प्रकाशित हो रही थी, तब एक बार उन्होंने मुझे उसके बारे में पूछा। मैंने बताया, आप सत्यवादी हैं, मिथ्या तो कुछ लिखेंगे नहीं, इसलिए किसी का नुकसान तो नहीं होगा, लेकिन फायदा क्या होगा, मालूम नहीं, क्योंकि जिसको जो लेना है, वही लेता है। बापू बोले, तुम्हारे जवाब से मुझे जो चाहिए था, वह मिल गया। 'नुकसान नहीं होगा' उतना बस है। जहां तक फायदे का ताल्लुक है—वे गुजराती में बोल रहे थे—*आपणां बधां कामोनुं परिणाम मींडुं छे* (हमारे सभी कामों का परिणाम शून्य है), उन्होंने हवा में उंगली से बड़ा गोल करके दिखाया और आगे कहा—*आपणे तो सेवा करी छुटीए* (हमें तो सेवा कर छूट जाना है)। यह बात बिल्कुल मेरे हृदय में पैठ गयी। बापू का सारा-का-सारा तत्त्वज्ञान इसमें आ जाता है।

मारग में तारण मिले, संत राम दोई
संत सदा सीस ऊपर, राम हृदय होई

मीराबाई का यह वचन मुझ पर भी ठीक-ठीक लागू होता है। मुझे भी मार्ग में दो ही तारण मिले। भगवान की कृपा से एक का आशीर्वाद मेरे सिर पर है और दूसरे का स्थान मेरे हृदय में है। ❑

गांधीजी और आज का भारत

❑ विष्णु प्रभाकर

मैं नहीं समझता कि गांधीजी को लेकर आज के भारत की चर्चा करने से कोई लाभ हो सकता है। गांधी आज एक नाम भर है, एक शब्द मात्र है। उस शब्द का अर्थ क्या है यह जानना तो दूर, वह शब्द भी आज की पीढ़ी के लिए परियों की कहानी का एक पात्र बनकर रह गया है।

गांधी-विचार की लंबी-चौड़ी व्याख्या न करते हुए मैं एक उर्दू शायर के शब्दों में केवल इतना कहना चाहूंगा कि :

'अंधेरा मांगने आया था, रोशनी की भीख।
हम अपना घर न जलाते, तो क्या करते।।'

और आज के कम्प्यूटर युग की पहचान भी एक दूसरे उर्दू शायर के शब्दों में इस प्रकार है :

'अंधेरा छा जायेगा जहान में,
अगर यही रोशनी रही।'

गांधीजी आज केवल इसलिए अधिक जाने जाते हैं कि उन्होंने भारत को विदेशी शासन से मुक्त कराने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी। लेकिन वास्तविकता यह है कि स्वाधीनता उनके लिए इतनी महत्त्वपूर्ण नहीं थी, जितने सत्य, प्रेम, अहिंसा आदि मानवीय मूल्य। उन्होंने सबसे अधिक सत्य और कर्म पर जोर दिया। यह सत्य और कर्म का सिद्धांत कभी भी झुठलाया नहीं जा सकता; पर आज शब्द अपने अर्थ से दूर हट गये हैं। अस्पृश्यता कानूनन समाप्त कर दी गयी है, पर वह नये-नये रूपों में निरंतर बढ़ती जा रही है। जब तक जाति-पांति का उन्मूलन नहीं होगा, अस्पृश्यता का अस्तित्व भी किसी-न-किसी रूप में बना रहेगा। सत्ताकामी लोग अपनी कुर्सी की रक्षा के लिए किसी भी सीमा तक जा सकते हैं और जा रहे हैं।

यह मात्र एक उदाहरण है। हर क्षेत्र में यही कहानी दोहरायी जा रही है, जिसका परिणाम आतंकवाद के रूप में हमारे सामने है। आज गांधी होते तो नोआखाली की तरह आतंकवादियों के बीच में जाकर रहने लगते। जनमानस की जितनी और जैसी पहचान उन्हें थी, वैसी और उतनी पहचान आज किसी में नहीं है। और जब तक यह पहचान नहीं होती, तब तक किसी समस्या का समाधान भी नहीं हो सकता। कम्प्यूटरी समाधान से हम गदगद हो सकते हैं, पर आश्वस्त नहीं। मानव-मूल्यों से रहित विज्ञान किसी भी युग में किसी का भी भला नहीं कर सकता।

बहुत कम लोग जानते हैं कि उन्होंने आधी धोती या लंगोटी क्यों पहनी। बार-बार इसके लिए लोगों ने उनका उपहास उड़ाया, लेकिन वह तो समाज के निचले तबके के अधनंगे, अधभूखे गरीब के साथ जुड़कर रहना चाहते थे। उन्होंने हमें एक मंत्र दिया था कि जब भी, कुछ भी करने जाओ तो पहले यह सोच लो कि इसको करने का लाभ समाज के सबसे निचले तबके के व्यक्ति को मिलेगा या नहीं। दावा तो आज भी यही किया जाता है, लेकिन परिणाम क्या है यह भी सबके सामने है।

उन्होंने हमें अपने परिवेश पर, अपनी भाषा पर और अपने वेश पर गर्व करना सिखाया था। आत्मसम्मान की यह भावना आज कहीं भी देखने को नहीं मिलती। उन्होंने कहा था कि हम अपनी खिड़कियां खुली रखें, जिससे बाहरी हवा अंदर आये, लेकिन यह भी हमें देखना है कि वह हवा आंधी का रूप न ले ले, जिससे हमारे पैर अपनी ही धरती से न उखड़ जायें। लेकिन आज हम अपनी धरती से उखड़ चुके हैं, यही सबसे बड़ी त्रासदी है। वे न मशीन के विरोधी थे, न विज्ञान के; पर मनुष्य को निकम्मा या व्यर्थ कर दे ऐसी यांत्रिकता वे नहीं चाहते थे।

वे अन्याय या प्रतिकार करना मनुष्य का जन्मसिद्ध अधिकार मानते थे; लेकिन एक निश्चित मर्यादा के भीतर। उनसे पूछा गया था कि अराजकता को मिटाने के लिए लोग क्या करें। उनका उत्तर था कि उन्हें शांति से अराजकता का सामना करना चाहिए। लोग अशांत होकर दुकानें लूटने लगें या मारा-मारी करने लगें तो उससे काम नहीं बन सकता। ऐसा करने से लोग बे-मौत मरते हैं और अगर डर के मारे सरकार झुक भी जाये और लोगों की मांग पूरी भी कर दे तो भी उससे न तो लोगों को फायदा पहुंचेगा, न सरकार को। अराजकता तो मिटती ही नहीं। अनाज पड़ा हो, फिर भी वह भूखों को न मिले तो वे सत्याग्रह कर सकते हैं। भीख मांगने या डाका डालने के बदले आमरण उपवास करें और इस तरह अपने लिए तथा दूसरों के लिए न्याय हासिल करें। वे कहते थे कि जो जाति मरना जानती है, उसे ही जीने का अधिकार है। आज के इस गहराते संकट के अवसर पर किसी को गांधी-नीति की याद नहीं आती। लेकिन एक बार जवाहरलाल नेहरू को कहना पड़ा था कि वैज्ञानिक प्रगति और मानव के बनाये अंतरिक्ष यान समस्याओं के नैतिक पहलू को नहीं बदल सकते। सारी-की-सारी वैज्ञानिक प्रगति अच्छे को बुरा और बुरे को अच्छा नहीं बना सकती। हमें अपने मस्तिष्कों को इस नये अणु युग, अंतरिक्ष की

और ग्रह-नक्षत्रों की यात्रा के युग के अनुरूप विचार करने योग्य बनाना चाहिए। अगर हम ऐसा नहीं करते हैं तो सिवा संपूर्ण विनाश के दूसरा कोई चारा नहीं।

नेहरू की यह भविष्यवाणी आज कितनी सच हो रही है। कभी-कभी कोई भूला-भटका व्यक्ति उस मार्ग की ओर इशारा अवश्य करता है, जिसे गांधी-मार्ग कहा जाता है; लेकिन नक्कारखाने में तूती की आवाज कौन सुनता है। कुछ लोगों ने स्वीकार किया हैकि सन् 1947 में हमने गांधी-मार्ग की उपेक्षा करके गलती की। उस समय यदि हम जनता के उत्थान और विकास के लिए अपनी प्राथमिकताओं का निर्णय स्वस्थ और व्यापक दृष्टि से कर सकते तो आज अंत्योदय की दिशा में बहुत आगे बढ़ गये होते।

गांधीजी ने हमें व्यापक कार्यक्रम दिया था, उसकी चर्चा यहां संभव नहीं है। उनका सपना था कि सारे देश में स्वावलंबी, स्वशासी और छोटे-छोटे ग्रामराज्य कायम हो जायें। उन्होंने कहा था कि खादी की वृत्ति का अर्थ है जीवन की आवश्यकताओं के उत्पादन और वितरण का विकेन्द्रीकरण। विकेन्द्रीकरण की इस भावना का समर्थन अमरीका के हेनरी फोर्ड, आस्ट्रेलिया के विख्यात अर्थशास्त्री कोलिन क्लार्क आदि ने अनेक पश्चिमी दुनिया के विद्वानों ने भी किया था। ग्रामीण जीवन अपनाने का अर्थ जंगली अवस्था को लौट जाना नहीं है, बल्कि डॉक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् के शब्दों में, 'भारत की प्रकृति के अनुकूल जो जीवन है, उसकी रक्षा करने का यह एकमात्र तरीका है।' पं. जवाहरलाल नेहरू भी मानते थे कि सच्चा संयोजन सरकार के किसी अंग के द्वारा हो ही नहीं सकता। उसमें ठेठ गांधी के लोगों का सहयोग होना चाहिए।

आज ये बातें कहने वाला कोई नहीं रह गया है। गांधीजी की बात को समझना तो दूर, आज तो कुछ लोग यह बात मानने को भी तैयार नहीं होंगे कि गांधीजी ने कभी कहा था, 'मैं इस हद तक तो समाजवादी हूं ही कि ऐसे सब कारखाने या तो राष्ट्रीयकृत होने चाहिए या राज द्वारा नियंत्रित। वहां काम करने की हालतें अच्छी होनी चाहिए। और उनमें काम करने वालों को सभी मानवोचित सुविधाएं मिलनी चाहिए। ऐसे कारखानों को मुनाफे के लिए नहीं, जनता के लाभ के लिए चलाना चाहिए। उनका प्रेरक उद्देश्य लोभ नहीं, प्रेम होना चाहिए।'

उन्होंने यह भी कहा था कि मैं यह भी नहीं चाहता कि कवि अपना संगीत छोड़ दे, किसान अपना हल, वकील अपने मुकदमे, डॉक्टर अपना शल्य-शाल्क्य। मैं तो उनसे सिर्फ 30 मिनट रोज कातने का त्याग चाहता हूं। मैंने भूखों मर रहे बेकार स्त्री-पुरुषों को गुजारे के लिए और अधपेट रहने वाले किसानों को अपनी आमदनी बढ़ाने के लिए चरखा कातने की सलाह जरूर दी है।

अगर हमने इन शब्दों के पीछे के अर्थ को समझने की वास्तविक चेष्टा की होती तो संभवतः हमें उस तरफ भटकना न पड़ता, जैसे हम आज भटक रहे हैं। चारों तरफ शब्दों का तूफान है, पर परिणाम है अराजकता और आतंकवाद। दक्षिण भारत की एक पत्रिका के संपादक ने बहुत ठीक लिखा था कि जब हम 21वीं सदी में छलांग लगा रहे होंगे तो हमारी पूंछ हमें वापस मिल जायेगी।

जाने दीजिए अर्थशास्त्र और विज्ञान की बातें। भारत सरकार के मंत्रियों के लिए उन्होंने एक आचार संहिता बनायी थी। अपने को गांधी का शिष्य मानने वाले कितने मंत्री हैं जो यह मानते हैं कि मंत्री पद सत्ता का नहीं, सेवा का द्वार है कि पदों के लिए छीना-झपटी होनी ही नहीं चाहिए। लाल फीताशाही को खत्म करने की योजना तो वे क्या बनाते, वे स्वयं इसका शिकार हो गये हैं। आज देश में 'फॉरेन' का क्रेज बढ़ रहा है और गांधीजी बात करते थे स्वदेशी की। वे कहते थे कि मंत्रियों को और गवर्नरों को ज्यादा-से-ज्यादा सत्यपरायण, अहिंसापरायण, नम्र और सहनशील होना चाहिए। वे सादगी और मितव्ययता को अपनायें। पुलिस का भय मिट जाना चाहिए। वह जनता के मित्र बने।

अंत में हम यही कहेंगे कि गांधीजी मानते थे कि उनके सपनों का स्वराज्य गरीबों का स्वराज्य होगा। जीवन की जिन आवश्यक वस्तुओं का उपयोग राजा और अमीर लोग करते हैं वही उन्हें भी सुलभ होनी चाहिए। उनके लिए प्रजातंत्र का अर्थ था कि इस तंत्र में नीचे से नीचे और ऊंचे से ऊंचे आदमी को आगे बढ़ने का समान अवसर मिलना चाहिए। जिस तरह मनुष्य के शरीर के सारे अंग बराबर हैं, उसी तरह समाज रूपी शरीर के सारे अंग बराबर होने चाहिए। यही समाजवाद है।

हमें अपने से ही यही प्रश्न पूछना है कि क्या हम ऐसा कर पाये? उनके ध्येय को सामने रखकर आगे बढ़ने की कोशिश की हमने? 'गांधीजी का समाज का जो चित्र था वह हमारी सरकार के सामने नहीं है,' ये भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के शब्द हैं। यही बात पं. जवाहरलाल नेहरू को परेशान करती थी, 'हमको अपने गरीब देश-वासियों के बारे में ज्यादा सोचना चाहिए और जितना जल्दी हो सके उनकी हालत को ऊंचा उठाने के लिए कुछ करना चाहिए।

कहते आज के शासक भी यही हैं लेकिन कम्प्यूटर की भाषा आदमी की भाषा नहीं है, क्या कोई इस सत्य को स्वीकार करेगा और मनुष्य को अपने अंतर में झांकने की दृष्टि देगा? कम्प्यूटर से समय बचाकर हम आखिर उसका क्या उपयोग करना चाहते हैं यही यक्ष-प्रश्न है। जो इसका उत्तर दे सकेगा वही गांधीजी के सपनों के भारत का निर्माण ज्यों का त्यों कर सकेगा। प्रश्न गांधीजी की हर बात को स्वीकार करने का नहीं है। विचार शाश्वत है, लेकिन विचार निरंतर विकसित भी होता है। यह विकसित होना ही उसके शाश्वत होने की गारंटी है। इस रहस्य को ही हमें समझना है। ❑

बदलाव के लिए सत्याग्रह का धर्म और मर्म समझने की जरूरत

❑ कमल जैन

महात्मा गांधी के प्रथम सत्याग्रह यानी चंपारण सत्याग्रह के सौवें साल में प्रवेश कर रहे हैं। लेकिन सामाजिक और राजनीतिक संघर्षों का समाधान तलाश रहा आज का समाज 'अहिंसा और सत्याग्रह' का सच्चा प्रयोग कर पा रहा है, लेकिन बदलाव की किरण दिखती नजर नहीं आती है। इसके लिए 'अहिंसा और सत्याग्रह' के वास्तविक धर्म और मर्म को ठीक से सीख-समझ की जरूरत है और यह सत्यनिष्ठा, अहिंसाभाव, निर्भयता, निर्वरता और नैतिकता के आत्मबल से हासिल हो सकता है। –सं.

चंपारण सत्याग्रह दुनिया के राजनैतिक इतिहास में ऐतिहासिक और अभूतपूर्व परिघटना है। चंपारण के इस प्रयोग से आमजन के हाथों में पहली बार, सत्याग्रह के रूप में ऐसा अचूक अस्त्र आया जिसके प्रयोग से आमजन ने बिना खून बहाये एक विश्वव्यापी साम्राज्य को जड़ से उखाड़ फेंका, जिनके राज्य में कभी सूरज नहीं डूबता था, उनका पूरे भारत व बाद में अन्य अनेक देशों में सूरज डुबो दिया। इसका असर दुनिया के अनेक मुक्ति संघर्षों पर पड़ा। दक्षिण अफ्रीका के नेल्सन मण्डेला आदि अनेक विश्व प्रसिद्ध नेताओं ने गांधीजी का अनुकरण किया। आज भी दुनिया में शांति और अहिंसा की मिसाल के रूप में गांधी का नाम आता है।

'चंपा के फूलों' से लदे पेड़ों की धरती के कारण इस इलाके का नाम पहले 'चंपा-अरण्य' पड़ा और फिर जोड़ते-घटते हुए (अप्रभंष) 'चंपारण' हो गया। हजारों भूमिहीन मजदूर एवं गरीब किसान खाद्यान्न के बजाय नील और अन्य नकदी फसलों की खेती करने के लिए बाध्य हो गये थे। वहां पर नील की खेती करने वाले किसानों पर बहुत अत्याचार हो रहा था। चंपारण में नील के 70 कारखाने थे, लगभग पूरा जिला इन कारखानों के हाथ में था। खेतों के यूरोपीय मालिक हर तरह से स्थानीय सामंती वर्ग की जगह ले चुके थे। 1917 तक, नील किसानों को तीनकठिया प्रणाली का पालन करने के लिए मजबूर किया गया था, जिससे उन्हें अपने भूमि के 20 भागों में से तीन भागों में नील की खेती करने के लिए बाध्य होना पड़ा। नीलों की खेती पर लगभग 40 प्रकार के अवैध उपकरों और करों को लागू किया जाता था, जिन्हें 'अबवाब' कहते हैं। किसानों ने इस तरह के उत्पीड़न के खिलाफ कई बार विद्रोह करने की कोशिश की, लेकिन इन सभी आंदोलनों को बेरहमी से दबा दिया गया।

गांधीजी स्थिति का जायजा लेने वहां पहुंचे। उनके दर्शन के लिए हजारों लोगों की भीड़ उमड़ पड़ी। किसानों ने अपनी सारी समस्याएं बतायीं। पुलिस सुपरिटेंडेंट ने गांधीजी को जिला छोड़ने का आदेश दिया। गांधीजी ने आदेश मानने से इनकार कर दिया। अगले दिन गांधीजी को कोर्ट में हाजिर होना था। हजारों किसानों की भीड़ कोर्ट के बाहर जमा थी। गांधीजी के समर्थन में नारे लगाये जा रहे थे। हालात की गंभीरता को देखते हुए मजिस्ट्रेट ने बिना जमानत गांधीजी को छोड़ने का आदेश दिया। लेकिन गांधीजी ने कानून के अनुसार सजा की मांग की। फैसला स्थगित कर दिया गया। इसके बाद गांधीजी फिर अपने कार्य पर निकल पड़े। अब उनका पहला उद्देश्य लोगों को 'सत्याग्रह' के मूल सिद्धांतों से परिचय कराना था। उन्होंने कहा स्वतंत्रता प्राप्त करने की पहली शर्त है—डर से स्वतंत्र होना। गांधीजी ने अपने कई स्वयंसेवकों को किसानों के बीच में भेजा। यहां किसानों के बच्चों को शिक्षित करने के लिए ग्रामीण विद्यालय खोले गये। लोगों को साफ-सफाई से रहने का तरीका सिखाया गया।

चंपारण के इस गांधी अभियान से अंग्रेज सरकार परेशान हो उठी। सारे भारत का ध्यान अब चंपारण पर था। सरकार ने मजबूर होकर एक जांच आयोग नियुक्त किया, गांधीजी को भी इसका सदस्य बनाया गया। परिणाम सामने था। कानून बनाकर सभी गलत प्रथाओं को समाप्त कर दिया गया। जमींदार के लाभ के लिए नील की खेती करने वाले किसान अब अपने जमीन के मालिक बने। गांधीजी ने भारत में सत्याग्रह की पहली विजय का शंख फूंका। चंपारण ही भारत में सत्याग्रह की जन्म-स्थली बना।

चंपारण आंदोलन ने गांधीवादी राजनीतिक रणनीति का सबसे पहला प्रदर्शन देखा जो अतिरिक्त संवैधानिक संघर्ष के तत्त्वों के संयोजन से संरचना के भीतर उपलब्ध संवैधानिक स्थान का उपयोग करके मौजूदा संरचना पर हमला था। सत्याग्रह का व्यापक और गहरा प्रभाव हुआ देश को अनेक लाभ हुए। उनमें पहला, सत्याग्रह की ताकत से लोग परिचित हुए, दूसरा जनशक्ति की ताकत से लोग परिचित हुए, तीसरा, स्वच्छता और शिक्षा को लेकर भारतीय जनमानस में नयी जागृति आयी, चौथा, महिलाओं की स्थिति सुधारने का प्रयास हुए और पांचवां, अपने हाथों से काते गये वस्त्र पहनने की सोच पैदा हुई।

लेकिन बहुत सकारात्मक और अहम भूमिका निभाने के बाद भी इनमें जो सुर्खियों से सबसे दूर रहे, वे थे—पीर मोहम्मद अंसारी (1882-1949)। जब गांधी चंपारण पहुंचे तब अंसारी बेतिया राज

इंग्लिश हाई स्कूल में टीचर थे। लेकिन इसके अलावा वह एक पत्रकार भी थे। वे इस इलाके के किसानों की समस्याओं और उनके उत्पीड़न की कहानी को कानपुर से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक अखबार 'प्रताप' के जरिए लोगों के सामने लाते थे। उन्हें कई झूठे मामलों में फंसाया गया, उन पर मुकदमा चला और 10 महीने की जेल की कड़ी सजा भी हुई।

गांधी ने जब चंपारण का दौरा किया तो गांधी पीर मोहम्मद मूनिस की मां से मिलने उनके घर भी गये। ऐसा माना जाता है कि किसी पत्रकार के घर पर गांधी की यह इकलौती यात्रा थी। चंपारण सत्याग्रह की एक शताब्दी बाद अब तक गुमनाम रहे मूनिस ने बिहार के बुद्धिजीवियों के एक वर्ग का ध्यान आश्चर्यजनक रूप से अपनी ओर खींचा है। अब ये तथ्य सामने आया है कि जो खत गांधी को लिखे गये थे वे तो दरअसल मूनिस के ही लिखे हुए थे।

महात्मा गांधी के चंपारण आंदोलन ने कई लोगों को प्रभावित किया और वे इस अभियान से जुड़ते चले गये, कुछ की भूमिका गांधी के करीबी सहयोगियों की रही, कुछ एक्टिविस्ट के तौर पर सक्रिय रहे जबकि हजारों की संख्या में फॉलोअर और समर्थक भी थे।

हाल ही में जिन किसान आंदोलनों से रु-ब-रु हुए, वह हमारी सरकारों की वैश्विक पूंजीवाद के अंध अनुगमन का नतीजा है। जिसमें पूंजी के लाभ के लिए किसानों और मजदूरों के हितों पर लगातार कुठाराघात किया गया है और किया जा रहा है। पूंजी के हित साधने के रास्ते सीधे आमजन, किसानों, मजदूरों के पेटों और दिलों से होकर गुजरते हैं। सरकारें निरंतर ऐसे कानून बना रही हैं, जो उच्च वर्ग के हित में है और उसी समय कमजोर वर्ग को और कमजोर करने वाले।

लेकिन इसके लिए पूंजीपति के मुनाफे की लूट पर लगाम लगानी पड़े, और यह काम ये राजनेता करना चाहते नहीं, कर सकते नहीं, क्योंकि इनकी असली लगाम, जनता के हाथ में नहीं पूंजीपतियों के हाथ में है। फलस्वरूप अभी खेती के उत्पाद तो लागत से कम पर बिक रहे हैं और कारखानों के उत्पाद दो गुने से सौ गुने तक में बिक रहे हैं।

कारपोरेट जगत से चंदा लेने के लिए हमारे यहां एकदम नये और गुमनाम तरीके का आविष्कार किया गया। कंपनियों को बैंक से गुमनाम बॉण्ड खरीदना है और किसी भी राजनैतिक दल को दे देना है। किसी को कभी भी पता नहीं चलेगा कि किसने किसको कितना दिया, अभी तक जो सीमा थी वह भी अब नहीं रही। मुनाफे की लूट का भरोसा न हो तो कौन धनपति, चुनावों और नेताओं, अफसरों के परिवारों के ऐश-ओ-आराम के लिए नेताओं को भारी-भारी चंदा देगा। गत वर्ष ही बैंकों का कई लाख करोड़ रुपये का कॉरपोरेट ऋण डूबत खाते में डाला गया। अभी फिर कहा जा रहा है कि उद्योग जगत ऋण के दबाव में होने से परेशान है, राहत देने के लिए बैंक ऋण माफ किया जाना है। इस परिप्रेक्ष्य में किसानों का जानलेवा कर्ज माफ करने की राह में तमाम तरह की परेशानियां गिनायी जा रही हैं।

खेती की लागत में कल्पनातीत वृद्धि हुई है, इस अनुपात में खेती के उपज मूल्यों में हुई वृद्धि नगण्य है। मजबूरन किसान कर्ज लेता है, जिसे चुकाना, फसलों से लागत तक नहीं निकलने के कारण, उसके लिए संभव नहीं होता। अभी तो किसान आत्महत्या की खबरें लगातार आ रही हैं, आंकड़े एक संवेदनशील समाज को चौंका देने के स्तर से ऊपर हैं, और सरकारें, किसान आत्महत्या और किसान आंदोलन को कुछ और ही रूप देने की कोशिश में लगी हैं।

यह सही है कि मात्र कर्ज माफी से किसानों की समस्या हल होने वाली नहीं है। अर्थव्यवस्था को किसान मजदूर हितैषी बनाया जाना जरूरी है। हमारे आज के किसानों को अहिंसा और सत्याग्रह का धर्म और मर्म जानना चाहिए, समस्याओं को सतह के बजाय ठेठ गहराई तक समझना चाहिए। जब समस्याओं की जड़ पहचानेंगे तो मुक्ति के रास्ते भी खुलेंगे और पूरे देश में चल रहे अनेक अहिंसक आंदोलन आपस में जुड़कर व्यवस्था बदलने की ताकत बन सकेंगे। ❑

भूदान गीत

सत्य अहिंसा शस्त्र न छूटे, सत्याग्रह संग्रामी से।
आज गरीबी से लड़ना है, जैसे लड़े गुलामी से।।

एक उदर, मुख एक सभी का, जीवन साधन एक रहे,
दशमुख बीस भुजा क्यों कोई, जग में बिना विवेक रहे।
पंडित मूढ़ धनी या निर्धन, सुत समान सब जननी के,
सबके लिए खुला धरती का, मंगल जीवन लेख रहे।
आत्मतत्त्व तो एक सभी में, भिन्न देह गुण ग्रामी से।
आज गरीबी से लड़ना है, जैसे लड़े गुलामी से।।

आज नये बलिदान मांगता, कलियुग पांखे खोल रहा।
बापू की पावन वाणी में, संत विनोबा बोल रहा।
जन-जन के अंतर से छूता, साम्य समीरण डोल रहा,
मनुज हृदय के जुड़ने से ही, एक निखिल भूगोल रहा।
बदल रही धारा जीवन की, शांति क्रांति परिणामी से।
आज गरीबी से लड़ना है, जैसे लड़े गुलामी से।।

प्रेम शांति की वीण बजाता, झोली में सद्भावों की,
नई सभ्यता रचने निकला, जो निःशोषक गांवों की।
सत्य अहिंसा पर आधारित, कर्म मूल्य श्रम को लेकर,
स्वर्ग से भी स्वच्छ बना दी, जिसने मिट्टी पानी को,
जग-प्रकाश की भीख मांगता, जैसे भिक्षु अकामी से।
आज गरीबी से लड़ना है, जैसे लड़े गुलामी से।।

–दीनेशचन्द्र

महिला सशक्तीकरण और गांधीजी

❑ हरिशंकर सिंह

महिला सशक्तीकरण का विचार आज के 21वीं सदी का एक महत्त्वपूर्ण विषय है। हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने न केवल देश को राजनीतिक परतंत्रता से बल्कि समाज के सभी शोषित एवं पीड़ित तथा महिलाओं को शोषण से मुक्त कराने का भी महत्त्वपूर्ण कार्य किया। महात्मा गांधी के विचार से ''जब महिलाएं, जिन्हें हम 'अबला' कहते हैं 'सबला' बनती है तब समाज के सभी असहाय लोग शक्ति-सम्पन्न बन जाते हैं।'' इनके विचार से, बिना सामाजिक सुधार के 'स्वराज्य' की प्राप्ति अर्थहीन है।

महिला सशक्तीकरण की अवधारणा : सशक्तीकरण एक बहुआयामी, बहुपक्षीय एवं बहु-स्तरीय अवधारणा है। सशक्तीकरण कई कारकों जैसे भौतिक, सामाजिक-आर्थिक, राजनीतिक, मानसिक, मनोवैज्ञानिक इत्यादि की क्रिया एवं प्रतिक्रिया के रूप में हमारे सामने आता है। महिला सशक्तीकरण की विवेचना एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में की जा सकती है जिनमें भौतिक, मानवीय एवं बौद्धिक जैसे—ज्ञान, सूचना, विचार एवं वित्तीय संसाधनों—मुद्रा एवं मुद्रा तक पहुंच इत्यादि के क्षेत्रों में नियंत्रण पर अधिकतम हिस्सेदारी प्राप्त हो सके। साथ ही घरेलू, सामुदायिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय मामलों में निर्णय की प्रक्रिया में भागीदारी कर शक्ति प्राप्त करने की प्रक्रिया भी महिला सशक्तीकरण है। महिला सशक्तीकरण शब्द सामाजिक न्याय एवं समानता की प्राप्ति हेतु महिलाओं द्वारा किये गये संघर्षों से भी जुड़ा हुआ है (बाटली वाला : 1994)।

शर्मा (1994 : 11) के विचार से 'सशक्तीकरण' की अवधारणा व्यक्ति के स्व-निश्चितता से सामूहिक प्रतिरोध, विरोध एवं गतिशीलता जो मूल शक्ति-संबंधों की चुनौती प्रदान करता है, तक की क्रियाओं को व्यक्त करता है। महिलाओं को सशक्त बनाने का अर्थ उन्हें दूसरों पर शासन करने अथवा शक्ति का प्रयोग दूसरों पर अपनी सर्वोच्चता स्थापित करना नहीं है। वास्तव में, सशक्तीकरण का अर्थ समानता के भाव में छिपा हुआ है।

इस संदर्भ में महिला सशक्तीकरण का मुख्य उद्देश्य महात्मा गांधी के 'सर्वोदय'—सभी के सहयोग से सभी का कल्याण तथा आर्थिक क्षेत्र में 'संरक्षकता का सिद्धांत' तथा सामाजिक जीवन में बिना जाति, धर्म अथवा वर्ग अथवा लिंग के भेदभाव पर आधारित है। प्रोमिला कपूर (1997) ने यह सही कहा है कि महिला सशक्तीकरण सही अर्थों में उन्हें अपनी क्षमताओं एवं योग्यताओं के उपयोग हेतु योग्य बनाना, अपनी क्षमताओं की पहचान करना तथा अपनी सही पहचान, जिनमें स्वतंत्रता का विचार, अभिव्यक्ति एवं क्रिया शामिल है का अपने जीवन में उपयोग करना है। साथ ही, यह केवल उन्हें अपनी क्षमताओं के प्रति जागरूक करना नहीं है; बल्कि उन्हें अवसर, सुविधाएं तथा बाह्य एवं आंतरिक वातावरण भी उपलब्ध कराना है ताकि वे अपनी आंतरिक क्षमताओं का उपयोग कर सके और उनमें आत्म-विश्वास एवं सामाजिक मनोवैज्ञानिक-आर्थिक आत्म पहचान तथा आत्मसम्मान का विकास हो और उनके प्रति होने वाले अन्याय, शोषण एवं हिंसा के विरुद्ध आवाज उठाने की क्षमता भी उनमें विकसित हो सके।

महात्मा गांधी एवं महिला सशक्तीकरण : महात्मा गांधी न केवल एक महान राजनेता थे बल्कि वे मानवता से अति प्रेम भी किया करते थे। उनमें महिलाओं एवं उनकी समस्याओं को समझने की एक विशेष मूल प्रवृत्ति भी थी तथा वे उनके लिए स्थाई रूप से सहानुभूति भी रखते थे। महात्मा गांधी ने 20 अक्टूबर, 1936 ई. को वर्धा से राजकुमारी अमृत कौर को एक पत्र में लिखा कि यदि आप महिलाएं अपने सम्मान एवं स्वाधिकार को महसूस करती हैं तथा इसका उपयोग सम्पूर्ण मानव जाति के लिए करती हैं तो आप इसे और भी अधिक अच्छा बना सकती हैं (जेटली : 1999)।

समाज में महिलाओं की प्रस्थिति एवं भूमिका : महिला सशक्तीकरण के प्रति महात्मा गांधी के विचार समय-समय पर महिलाओं के प्रति उनके द्वारा कही गयी विभिन्न बातों में झलकती है। गांधी ने कहा, अगर पुरुष ने अपने अंधे स्वार्थ से नारी की आत्मा को कुचला न होता, जैसा कि उसने किया अथवा अगर नारी ने इस 'आनंद' के प्रति समर्पण न कर दिया होता, तो उसने दुनिया के समक्ष अपने अंदर छिपी हुई असीम शक्ति का प्रदर्शन किया होता। विश्व अपनी गरिमा में देखेगा जब महिलाएं अपने लिए पुरुष के बराबर संभावनाएं प्राप्त कर लेंगी और अपनी पारस्परिक सहयोग और मेल की क्षमता का पूर्ण विकास कर लेंगी (यंग इंडिया, 7-5-1931, पृ. 16)।

समान प्रस्थिति : एक समान मानसिक क्षमताओं से पूर्ण महिलाएं, पुरुषों की साझीदार हैं। उन्हें पुरुषों की छोटी से छोटी क्रिया-कलापों में प्रतिगामी बनने का अधिकार है एवं उन्हें पुरुषों के साथ स्वतंत्रता का समान अधिकार प्राप्त है। पुरुषों के समान महिलाओं को भी अपने कार्यक्षेत्रों में सर्वोच्च स्थान प्राप्त है, ऐसा सामान्य रूप से होना चाहिए, न कि शिक्षा-दीक्षा के एक परिणाम के रूप में।

अंधी परम्परा की शक्ति के द्वारा अति अज्ञानी एवं तुच्छ पुरुष भी महिलाओं से श्रेष्ठता रखते आ रहे हैं, जिसके वे हकदार नहीं हैं, और जो नहीं होना चाहिए। हमारे अनेक आंदोलन महिलाओं की स्थिति के कारण आधे रास्ते में ही रुक जाते हैं (एस. डब्ल्यू., पृष्ठ 425)

सच्ची शिक्षा : गांधीजी ने कहा, ''मैं

महिलाओं की सही शिक्षा में विश्वास रखता हूं लेकिन मैं मानता हूं कि महिलाएं पुरुषों की नकल कर या उनसे प्रतिस्पर्धा करके विश्व में अपना योगदान नहीं दे सकती। महिलाएं इस दौड़ में भाग ले सकती हैं, पर वे ऊंचाइयों तक नहीं पहुंच सकती। उन्हें पुरुषों का पूरक होना है (हरिजन, 27-2-1937, पृ. 19)

उचित स्थान : गांधी ने कहा, किसी न किसी रूप में पूर्व से ही पुरुषों ने महिलाओं पर आधिपत्य जमाया है, और इसलिए महिलाओं में एक हीनता की भावना का विकास हो गया है। वे ऐसा मानने लगी हैं कि वे पुरुषों से हीन हैं लेकिन ज्ञानी पुरुषों ने महिलाओं की समान स्थिति को स्वीकार किया है। फिर भी इसमें संदेह नहीं कि कुछ बिन्दुओं पर विभेद है जबकि मूल रूप से दोनों एक हैं। यह भी सत्य है कि स्वरूप में दोनों के बीच एक गहरा विभेद है। अतः दोनों के व्यवसाय भी भिन्न होने चाहिए। मेरा मानना है कि जिस तरह मूलरूप से पुरुष और स्त्री एक हैं, उनकी समस्याएं भी एक होनी चाहिए। दोनों की आत्माएं समान हैं। दोनों एक समान जीवन व्यतीत करते हैं। दोनों की समान भावनाएं हैं। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। एक की सक्रिय सहायता के बिना दूसरा जीवित नहीं रह सकता (हरिजन, 24-04-1940, पृष्ठ 15)।

लैंगिक समानता : लैंगिक समानता पर गांधीजी ने कहा, इसका अर्थ काम-धंधे की समानता नहीं हैं। एक महिला द्वारा शिकार करने या भाले का धारण करने पर कोई वैधानिक प्रतिबंध नहीं हो सकता। परंतु पुरुषों द्वारा किये जाने वाले कार्यो से वे स्वाभाविक रूप से पीछे हटती हैं। प्रकृति ने लिंगों को एक दूसरे का पूरक बनाया है। उनके स्वरूप के अनुरूप उनके कार्य भी बताये जाते हैं (हरिजन, 2-12-1939, पृष्ठ 359)।

महिला सशक्तीकरण के मार्ग : पुरुष और महिला दोनों समकक्ष हैं, पर वे समरूप नहीं हैं। वे अनुपम जोड़े हैं, एक दूसरे के पूरक के रूप में, एक दूसरे को सहयोग करते हुए। एक के बिना दूसरे के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती। गांधीजी के अनुसार, महिला सशक्तीकरण के तीन प्रमुख कारक हैं—शिक्षा, रोजगार एवं सामाजिक संरचना में परिवर्तन। तीनों कारक समान रूप से महत्त्वपूर्ण हैं तथा परस्पर मिले हुए हैं। पुरुषों को महिलाओं के प्रति अपनी मनोवृत्ति बदलनी होगी और महिलाओं को वास्तविक रूप में समान अधिकार देने हेतु समाज को बदलना होगा।

निष्कर्ष : महिलाओं के प्रति गांधीजी का व्यवहार जैसा कि उनके तुलनात्मक एवं न्यायपूर्ण भावनाओं से बना था वैसा ही एक पितृसत्तात्मक अथवा उदारवादी रूढ़िवादिता से, जो उनके सांस्कृतिक एवं सामाजिक विचारों का मूल आधार था। यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि गांधीजी ने महिला सशक्तीकरण एवं उनकी नियति में सुधार के लिए मार्ग दिखाया था। गांधीजी ने महिलाओं को निर्भीक एवं साहसी बनने के लिए दिशा-निर्देश प्रदान किया एवं उनके लिए स्वयं के उद्धार एवं अपनी मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए प्रेरित किया। महिला सशक्तीकरण की सामाजिक-ऐतिहासिक व्याख्या, जिसे पहले कल्याणकारी, फिर विकास और अब सशक्तीकरण के रूप में जाना जाता है; लेकिन व्यवहारिक तौर पर आज हमें महिला सशक्तीकरण का एक अधिक सकारात्मक चित्र प्रस्तुत करना है। ❑

छत्तीसगढ़ में राष्ट्रीय संगोष्ठी सम्पन्न

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 150वीं जयंती के अवसर पर छत्तीसगढ़ प्रदेश सर्वोदय मंडल की ओर से 18 दिसंबर, 2017 को 'भारतीय कृषि एवं ग्रामीण विकास में गांधी विचार का महत्त्व' विषय पर इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर में राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया।

'भारतीय कृषि एवं ग्रामीण विकास में गांधी विचार का महत्त्व' विषय पर उपस्थित वक्ताओं एवं अतिथियों में लगभग सभी ने अपने-अपने विचार किया और माना कि भारतीय कृषि एवं ग्रामीण विकास का एकमात्र विकल्प गांधी विचार ही है। वक्ताओं ने सन् 1974 में गांधीजी के चम्पारण सत्याग्रह की यादें ताजा कीं और बताया कि बापू के 18 रचनात्मक कार्यक्रमों के माध्यम से ही भारतीय कृषि एवं ग्रामीण विकास को गति दी जा सकती है। आज गांव के छोटे-छोटे कुटीर उद्योग लुप्त होते जा रहे हैं, किसानों की आर्थिक स्थिति दयनीय होती जा रही है, जिससे किसान आत्महत्या करने पर मजबूर हो रहे हैं। अंततः यह राष्ट्र के लिए भी अहितकर है।

कृषि विश्वविद्यालय के कुलपति एस. के. पाटिल ने बताया कि विद्यार्थियों को अवकाश एवं आर्थिक सहयोग प्रदान कर कृषि कार्य में उनकी रुचि बढ़ाने का अभिनव प्रयोग किया जा रहा है। उन्हें प्रेरित किया जाता है कि वे अपने घर जाकर कृषि-कार्य में सहयोग करें, इससे उन्हें भी लाभ होगा और वे प्रायोगिक रूप से अध्ययन कर सकेंगे। इस पहल से युवकों में कृषि-कार्य के प्रति रूचि पैदा होगी तथा कम लागत में अधिक आय प्राप्त किया जा सकता है।

संगोष्ठी में सर्व सेवा संघ के महामंत्री शेख हुसैन, मंत्री चंदनपाल, सर्वोदय समाज के संयोजक आदित्य पटनायक, सर्व सेवा संघ आंदोलन समिति के संयोजक अविनाश काकड़े सहित जीवीवीएसडीएस प्रसाद, पूर्व प्रमुख सचिव गणेश शंकर मिश्रा, कुलपति एस. के. पाटिल, छ.ग. शासन वित्त आयोग के अध्यक्ष चन्द्रशेखर साहू, लखन लाल साहू, ओ.पी. कश्यप, आचार्य रमेन्द्रनाथ मिश्र, छत्तीसगढ़ प्रदेश सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष सियाराम साहू एवं काफी संख्या में लोकसेवक एवं महिलाएं उपस्थित थीं। **-सियाराम साहू**

शेडो बैंकिंग की लंबी काली छाया

❑ नेस्मी के अकिरन

नियमित बैंकिंग प्रणाली के समानांतर गतिशील शेडो बैंकिंग प्रणाली की वजह से ही सन् 2008 का वैश्विक वित्तीय संकट खड़ा हुआ था। वर्तमान में भी उन पर नियंत्रण एवं नियमन ठीक से नहीं हो पा रहा है। –सं.

दुनिया भर के बैंक बढ़ते नियमन के चलते अपनी गतिविधियां शेडो बैंकिंग (छाया बैंकिंग) की ओर मोड़ रहे हैं। वित्तीय क्षेत्र में यह एक स्थानीय प्रणाली है, परंतु यह ऐसे उत्पाद उपलब्ध कराती है जो कि निवेशक को निवेश से अलग कर देता है। अतएव मूल्य एवं जोखिम दोनों ही तय कर पाना अधिक कठिन हो जाता है। पारदर्शिता की इस कमी के चलते हमारी संपूर्ण वित्तीय प्रणाली में जोखिम बढ़ता जाता है परिणामस्वरूप यह सभी तरह के धक्कों जिनकी वजह से सन् 2008 का वित्तीय संकट पैदा हुआ था, के प्रति संवेदनशील हो जाता है। इसका ताजातरीन उदाहरण कथित बीस्पोक ट्रेन्च आपरट्यूनिटी (किश्त अवसर, इसका पूर्ववर्ती शब्द जिसका भावार्थ बराबरी के जोखिम गिरवी रखना) है। इसे शेडो बैंकिंग द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। गौरतलब है यह कमोवेश कोलेटरोइजड डेब्ट्स आब्लिगेशन का समानार्थी है। अर्थात गिरवी रखे हजारों ऋण जो कि जोखिम भरे थे, और यह ही वैश्विक वित्तीय संकट के लिए जिम्मेदार भी थे।

शेडो बैंकिंग में हेज फंड, प्राइवेट इक्विटी फंड, म्युचल फंड, पेंशन फंड एवं दान, बीमा एवं वित्तीय कम्पनियां जो कि सार्वजनिक तरलता के बिना और सरकारों की गारंटी न होने के बावजूद ऋण देते हैं, शामिल हैं। शेडो बैंकिंग सामान्यतया देश के बाहर किसी ऐसे वित्तीय केन्द्र से संचालित होती है, जहां के नियमन काफी लचीले हों। वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान अनेक नियमित बैंकों द्वारा अपनी सीमा से बाहर जाकर वित्त प्रदान करने का निश्चय इस भरोसे पर ही हुआ था कि शेडो बैंकिंग के कर्ता-धर्ता इस समस्या से निपट लेंगे। शेडो बैंकिंग अभी भी वास्तविक अर्थव्यवस्था में वित्त प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। उदाहरण के लिए फाइनेंशियल स्टेबिलिटी बोर्ड के अनुसार सन् 2013 में शेडो बैंकिंग द्वारा कुल वित्तीय संपदा प्रणाली का 25 प्रतिशत ऋण उपलब्ध करवाया था। उस दौरान बैंकों की सम्पत्ति में (सन् 2011-14) औसतन 5.6 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि हुई थी जबकि शेडो बैंकिंग की वृद्धि 6.3 प्रतिशत रही थी। यदि शैडों बैंकिंग की सन् 2010 से 2014 के मध्य सम्पत्ति की वृद्धि की तुलना करेंगे तो पायेंगे कि चीन में यह 2 से 8 प्रतिशत थी एवं अमेरिका में इसका जबरदस्त प्रभुत्व बना रहा और बैंकिंग के क्षेत्र में इसकी हिस्सेदारी करीब 40 प्रतिशत थी।

निजी क्षेत्र के ग्यारंटरों की असफलता ने शेडो बैंकिंग की मदद की और क्रेडिट रेटिंग कम्पनियों की चूक के चलते जोखिम को कमतर नापा गया। क्रेडिट रेटिंग कम्पनियों से जब उनके निर्धारण की प्रक्रिया के बारे में पूछा जाता है तो सामने आता है कि वहां पारदर्शिता का सर्वथा अभाव है। अतएव तीसरा पक्ष किसी भी तरह का कोई आकलन कर ही नहीं सकता। कम खर्चीले ऋण की अत्यधिक आपूर्ति ने भी सन् 2008 के वैश्विक वित्तीय संकट को पैदा करने में मदद की थी। ऐसा इसलिए क्योंकि निवेशकों ने निजी ऋण एवं तरलता वृद्धि का जरूरत से ज्यादा अनुमान लगा लिया था।

आज वित्तीय क्षेत्र की सबसे बड़ी चुनौती यह है कि शैडो बैंकिंग ने नियम एवं मानक तैयार किये जायें, जिससे कि जोखिम की संवेदनशीलता को ठीक समय पर व उचित तरीके से समझा जा सके। यदि निवेशक एवं मध्यस्थ नये खतरों की पहचान में असफल रहते हैं तो इस बात की सम्भावना कम है कि नियामक जिनके पास संसाधनों की कमी है इन्हें पहचान पायेंगे, ऐसे में शेडो बैंकिंग की एकबार पुनः विजय हो सकती है।

पूंजी की आवश्यकता में वृद्धि से वित्तीय मध्यस्थों की क्षमता को सीमित किया जा सकता है। इससे जोखिम भरी गतिविधियों का विस्तार भी हो सकता है। परंतु साथ ही साथ वित्तीय मध्यस्थों की ठीक से निगरानी भी हो सकती है। ऐसा इसलिए कि क्रेडिट रेटिंग को उपेक्षित जोखिम की उपस्थिति पर आधारित नहीं किया जा सकता। इसी तरह ठीक से नियमनशुदा बैंकों को भी शैडो बैंकिंग के बिना आजमाए हुए नवाचारों के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता है। परंतु नियमन के बावजूद एक बड़ी समस्या का निराकरण संभव नहीं है। नियमन का अर्थ है जांच-परख को लेकर बेहतरीन संतुलन बनाये रखना और वित्तीय नवाचारों के लिए स्थान उपलब्ध करना। ऐसा इसलिए क्योंकि विविधता में कमी या बिना जांची-परखी वित्तीय प्रणाली से संस्थागत जोखिम की संभावना बढ़ जाती है।

नियमन का बहुत कम होना भी जोखिम को बुलावा देना है। वहीं दूसरी ओर अत्यधिक कठोर नियमन भी वित्तीय जीवनरेखा में प्रवाह को रोकेगा। परंतु वर्तमान→

ईरान का सूफी संत तथा कवि मौलाना जलालुद्दीन रूमी

❑ रसूल अहमद 'अबोध'

संसार में कभी-कभी ऐसे व्यक्ति पैदा हो जाते हैं, जो सैकड़ों-हजारों वर्षों तक मनुष्य जीवन को प्रेरणा देते रहते हैं। जो यद्यपि साधारण प्राकृतिक नियमों के अनुसार ही जन्मते और मरते भी हैं, तथापि उनकी मृत्यु उनके व्यक्तित्व के लिए कभी आवरण नहीं बन पाती। साधारणतः हम देखते हैं कि वह हमारे बीच में नहीं हैं; मगर, फिर भी उनका स्पर्श हम महसूस करते रहते हैं। ऐसे व्यक्ति मनुष्य जीवन की अंधेरी रात में वह प्रकाश-स्तम्भ हैं, जिनके प्रकाश में अगर हम चाहें तो अपनी मंजिल तय कर सकते हैं।

मौलाना जलालुद्दीन रूमी ऐसे ही इने-गिने व्यक्तियों में थे, जो यद्यपि पैदा सन् 604 हिजरी 30, सितंबर, 1207 ई. में हुए और मृत्यु उनकी सन् 672 हिजरी, 17 सितंबर, 1273 ई. में हुई, मगर अब तक हजारों-लाखों मनुष्य ऐसे हैं, जो उनकी 'मसनवी' और 'दीवान शम्स तबरेज' को पढ़कर अपनी आध्यात्मिक प्यास बुझाते हैं।

मौलाना जलालुद्दीन रूमी के पिता का नाम मौलाना बहाउद्दीन था। विद्या और बुद्धि में वह अपने समय के माने हुए लोगों में थे। संतों का सा जीवन बिताते थे और अध्ययन-अध्यापन में ही लगे रहते थे। उनके साधु जीवन और विद्या तथा आध्यात्मिक ज्ञान के कारण उनके आसपास लोगों का जमघट लगा रहता था।

ऐसे ही एक समय की घटना है। मौलाना बहाउद्दीन के इर्द-गिर्द हजारों की भीड़ लगी हुई थी कि संयोगवश ख्वारजम शाह भी उनसे मिलने के लिए पहुंचा। भीड़-भाड़ देखकर इमाम राजी से ख्वारजमशाह ने कहा, 'कितने अधिक लोग इकट्ठा हैं!' इमाम राजी ने उत्तर में कहा, 'अगर अभी से सावधानी न रखी गयी तो कठिनता होगी।'

वापस जाकर ख्वारजम शाह ने इमाम राजी के संकेत से खजाने की कुंजियां मौलाना बहाउद्दीन के पास भेज दीं और कहला भेजा कि राज्य में तो खजाना और उसकी कुंजी ही मेरे पास रह गयी हैं, वह भी सेवा में भेज रहा हूं।

मौलाना बहाउद्दीन ने ख्वारजम शाह का अभिप्राय समझ लिया कि इसे राज के छिन जाने का भय हो गया है। इसलिए उन्होंने कहला दिया कि जुमे (शुक्रवार) को भाषण करके चला जाऊंगा।

शुक्रवार को भाषण करके जब वह शहर (बलख) से निकले तो तीन सौ साधक शिष्य भी उनके साथ हो लिये। ख्वारजम शाह को जब मौलाना बहाउद्दीन के इस प्रस्थान का हाल मालूम हुआ तो बहुत पछताया। लौट चलने के लिए बड़ा आग्रह किया तथा अनुनय विनय की, मगर वह किसी तरह न माने।

सन् 610 हिजरी 1212 ई. में नीशापुर पहुंचे। प्रसिद्ध संत ख्वाजा फरीदुद्दीन अत्तार उनसे मिलने के लिए आए। इस समय मौलाना जलालुद्दीन रूमी की आयु केवल छः वर्ष की थी। मगर होनहार बिरवान के होत चिकने पात ख्वाजा फरीदुद्दीन ने देख लिया और देखते ही जलालुद्दीन रूमी के पिता मौलाना बहाउद्दीन से कहा, 'इस बालक से असावधान न रहना' और अपनी पुस्तक 'असरार नामा' उन्हें भेंट की।

अपने पिता मौलाना बहाउद्दीन के साथ मौलाना जलालुद्दीन रूमी ने नीशापुर से बगदाद, हिजाज, लारन्दा और कोनिया जैसे अनेक स्थानों की यात्रा की। लारन्दा में सात वर्ष तक मौलाना बहाउद्दीन ठहरे रहे और यहीं पर अठारह वर्ष की आयु में मौलाना जलालुद्दीन का विवाह हुआ। लारन्दा से कोनिया पहुंचने पर कुछ दिनों के बाद मौलाना बहाउद्दीन का देहांत हो गया।

मौलाना जलालुद्दीन रूमी को प्रारम्भिक शिक्षा अपने पिता मौलाना बहाउद्दीन से प्राप्त हुई। इसके बाद सय्यद बुरहानुद्दीन मोहकिकक, जो मौलाना बहाउद्दीन के शिष्य थे—उनके द्वारा भी बहुत कुछ उनकी शिक्षा-दीक्षा हुई।

बुरहानुद्दीन मोहकिकक सांसारिक विद्याओं के साथ-साथ अध्यात्म विद्या के भी पहुंचे हुए ज्ञाता थे और मौलाना बहाउद्दीन से उन्होंने अध्यात्म के रहस्यों का ज्ञान भी प्राप्त किया था। अतः अपने गुरु के पुत्र मौलाना जलालुद्दीन रूमी को भी अध्यात्म के रहस्यों से अवगत करा दिया।

पिता की मृत्यु के बाद दूसरे वर्ष 25 वर्ष की आयु में मौलाना जलालुद्दीन रूमी ने विद्या-अध्ययन के लिए शाम, दमिश्क और हलब जैसे अनेक स्थानों की यात्रा की। इस प्रकार मौलाना ने विद्याध्ययन में पूर्ण योग्यता प्राप्त कर ली।

मगर यह सब कुछ होते हुए भी अभी मौलाना के जीवन में वह घटना न घटी थी, जिसने मौलाना को सारे संसार में प्रसिद्ध कर दिया, और जिसके कारण मौलाना ने ऐसी रचनाएं कीं, जो सदियों से लाखों आध्यात्मिक पिपासुओं को शांति प्रदान कर रही हैं।

→चलायमान वैश्विक वित्तीय क्षेत्र में इन दोनों में संतुलन बनाये रखना सर्वथा असंभव है। पिछले वित्तीय संकट के बाद सामने आया बासेल समझौता, इस दिशा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता रहेगा और इस संस्थागत जोखिम को रोकने में सहायक सिद्ध हो सकता है। आवश्यकता इस बात की है कि नियामक शेडो बैंकिंग की प्रकृति को ध्यान में रखें और अपने कार्य में पूरी पारदर्शिता भी बरतें। परंतु इस क्षेत्र का बेलगाम व्यवहार और आपसी गठजोड़ की लंबी शृंखला, नियामकों के कार्य को अत्यन्त कठिन व दुष्कर बना देगी। ❑

यह घटना एक विचित्र व्यक्ति शम्स तबरेज से मौलाना की भेंट के रूप में घटी। यद्यपि साधु-संतों के जीवन के संबंध में जिस प्रकार की चमत्कारिक किंवदन्तियां प्रसिद्ध हो जाती हैं, मौलाना रूमी और शम्स तबरेज की भेंट के संबंध में भी ऐसी किंवदन्तियों की कमी नहीं है, तथापि इतना निश्चित है कि शम्स तबरेज की भेंट मौलाना रूमी के जीवन को पूर्ण रूप से पलट देने का प्रधान और एकमात्र कारण है।

सिपहसालार, जो मौलाना रूमी का प्रधान शिष्य था और जिसने चालीस वर्ष तक मौलाना का सतसंग लाभ किया था तथा मनाकेबुल आरेफीन ने यह घटना सन् 642 हिजरी की बतायी है। सिपहसालार का कथन है कि शम्स तबरेज से मौलाना की भेंट होने पर छः महीने तक दोनों व्यक्ति बिना अन्न-जल के साधना में निरत रहे। मनाकेबुल आरेफीन तीन महीने बताता है। मगर यह निश्चित है कि इसके बाद से मौलाना के जीवन में भारी परिवर्तन आ गया।

मौलाना के जीवन में इस प्रकार के परिवर्तन का कारण चूंकि शम्स तबरेज की भेंट और उनका सत्संग था, इसलिए मौलाना के शिष्य शम्स के विरोधी हो गये, जिससे कालान्तर में शम्स तबरेज के बलिदान या उनके अज्ञातवास की घटना घटी।

शम्स तबरेज के बाद मौलाना का सत्संग सलाहुद्दीन जरकोब के साथ होने लगा। सलाहुद्दीन की मृत्यु के बाद हिसामुद्दीन चिलपी, जो मौलाना के प्रधान शिष्यों में थे, मौलाना के सत्संगी बने। इन्हीं हिसामुद्दीन चिलपी की प्रार्थना पर मौलाना रूमी ने अपनी जगत प्रसिद्ध रचना 'मसनवी मानवी' लिख। इस ग्रंथ के सात भाग हैं, जिनमें 45000 के लगभग पद्य हैं। इस ग्रंथ की जितनी टीकायें लिखी गयी हैं, उतनी किसी अन्य फारसी ग्रंथ की नहीं लिखी गयीं। 'दीवान शम्स तबरेज' भी मौलाना रूमी की ही रचना है, जो यद्यपि 'मसनवी' की तरह प्रसिद्ध नहीं है, मगर कई लोग काव्य की दृष्टि से उसे मसनवी से कम नहीं मानते।

सन् 672 हिजरी अर्थात 1273 ई. में कोनिया में बड़े जोर का भूचाल आया और चालीस दिनों तक आता रहा। शहर के सारे लोग बेचैन इधर-उधर घूमते थे। अंत में मौलाना के पास आये और पूछा कि यह क्या दैवी प्रकोप है? मौलाना ने उत्तर दिया, 'पृथ्वी भूखी है, खाना चाहती है, और ईश्वर ने चाहा तो जल्द ही उसे भोजन मिल जायेगा।'

अभी थोड़े ही दिन बीते थे कि मौलाना की तबीयत खराब हुई। अकमलुद्दीन और गजनफ्फर नाम के दो योग्य हकीमों ने इलाज शुरू किया। मगर नाड़ी स्थिति समझ में न आती थी। हकीमों ने मौलाना से पूछा, मगर उन्होंने कोई ध्यान न दिया। लोगों ने समझा कि मौलाना अब चंद दिनों के मेहमान हैं।

बीमारी का हाल सुनकर सारा शहर दौड़ पड़ा। शेख सदरुद्दीन जो एक विद्वान संत थे, वह भी देखने को गये। मौलाना की हालत देखकर अधीर हो गये, स्वास्थ्य-लाभ के लिए ईश्वर से प्रार्थना की। मौलाना ने कहा, 'प्रेमी और प्रेम-पात्र में बस जरा-सा परदा रह गया है। क्या आप नहीं चाहते कि परदा उठ जाय और ज्योति-ज्योति में मिल जाय?'

सन् 672 हिजरी अर्थात 1273 ई. को सूर्यास्त होते होते ज्योति ज्योति में मिल गयी।

रात बीत जाने पर दूसरे दिन सुबह अर्थी उठायी गयी। जवान, बूढ़े, औरत, मर्द, अमीर, गरीब, विद्वान, मूर्ख सब अर्थी के साथ-साथ रोते-चीखते चले। हजारों लोगों ने शोक में अपने कपड़े फाड़ डाले। ईसाई और यहूदी अर्थी के आगे-आगे अपनी धर्म पुस्तकें पढ़ते चल रहे थे। बादशाह ने पूछा, 'तुम्हारा मौलना से क्या संबंध?' उन लोगों ने उत्तर दिया, 'यह व्यक्ति यदि तुम्हारा मुहम्मद था तो हमारा ईसा व मूसा था।'

1 फरवरी, 1952 ❑

शोक-संवेदना

विनोबाजी के विचारों से प्रेरित एवं गांव के गरीब बच्चों के लिए समुचित शिक्षा के प्रति समर्पित बजरंगी सिंह (मास्टर साहब) का 4 दिसंबर, 2017 को निधन हो गया। आप 90 वर्ष के थे।

मास्टर साहब मध्य प्रदेश के सागर जिले में सरकारी स्कूल में शिक्षक थे, विनोबाजी के भूदान आंदोलन से प्रभावित होकर अपनी सरकारी नौकरी छोड़ दी और आंदोलन में कूद पड़े। कुछ दिनों लगातार पदयात्रा में साथ रहे।

विनोबाजी के क्षेत्र संन्यास के बाद मास्टर साहब ने अपने पैतृक गांव सायर (गहमर), गाजीपुर (उत्तर प्रदेश) में आपातकाल के बाद सन् 1978 में गरीब बच्चों की शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए 'सर्वोदय जूनियर हाईस्कूल' की स्थापना की। आप गरीब बच्चों की समुचित शिक्षा को लेकर हमेशा चिन्तित रहते थे। बच्चे ही राष्ट्र के भविष्य होते हैं, इसलिए उन्हें समुचित शिक्षा मिलनी चाहिए, जिसके लिए आजीवन संघर्षरत रहे।

आपने 4 दिसंबर की सुबह रोज की तरह नित्य क्रियाओं से निवृत्त होकर विष्णु सहस्त्रनाम और गीता का पाठ करके अपने पौत्र प्रशान्त को बुलाकर कहा कि जीवन में तीन बातों का गांठ बांध लो—1. नित्य गीता का पाठ करना एवं उस अनुसार आचरण करना, 2. सत्य बोलना और लोगों की मदद करना एवं 3. स्कूल को संभालना और गरीब बच्चों को शिक्षा हमेशा मिलती रहे, इसका ध्यान रखना। अब मैं जा रहा हूं।

मास्टर साहब 'सर्वोदय जगत' तथा 'गांधी मार्ग' के नियमित पाठक थे, साथ ही लगभग सर्वोदय की सभी पत्रिकाओं का गहन अध्ययन भी करते थे। आप छात्रयुवा संघर्ष वाहिनी के साथी श्री ईश्वरचन्द के पिताजी थे। सर्वोदय जगत परिवार दिवंगत आत्मा की शांति के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता है। **–स. ज. प्रतिनिधि**

बा-बापू : 150वीं जयंती पर विशेष

'बा'

गांधी की दोस्ती

❑ गिरिराज किशोर

गांधीजी को लेकर एक बड़ा और चर्चित उपन्यास प्रस्तुत कर चुके श्री गिरिराज किशोर ने अब बा पर कलम उठायी है। बा पर कुछ भी लिखना बहुत कठिन था। नहीं के बराबर जानकारियां। 'पहला गिरमिटिया' की सामग्री जुटाने में उन्हें कोई दो हजार पुस्तकों से मदद मिली थी। और 'बा' उपन्यास लिखते समय मुश्किल से दो पुस्तकें सामने थीं। वे उन सब लोगों से मिले, जिन्हें कस्तूरबा के बारे में थोड़ी-सी भी जानकारी थी और उन जगहों पर गये, जहां बा ने थोड़ा या बहुत समय बिताया था। इस तरह बनी यह कथा, यह इतिहास बा के अलावा खुद बापू के दो और रूपों को भी सामने रखता है—पति और पिता का रूप। प्रस्तुत है 'बा' का एक अंश, जो बा-बापू : 150 के अवसर पर क्रमशः प्रकाशित हो रहे हैं। **–संपा.**

जोहान्सबर्ग के स्टेशन पर उतरकर कस्तूरबा की आंखें चारों तरफ मोहनदास को खोज रही थीं। लेकिन वहां मोहनदास तो मोहनदास, उनकी तरफ से चिड़िया का बच्चा भी नहीं आया था। कस्तूरबा अंदर ही अंदर आहत थी। उसके मन में खयाल आया, वह एक ऐसे बिन्दु पर खड़ी है जहां पति के द्वारा सोच लिया गया है, बच्चे पहुंच गये तो अच्छा, नहीं पहुंचे तो भी अच्छा। इस खयाल ने कस्तूरबा को और भी दुःखी कर दिया था। उसके प्रति कोई नाराजगी हो सकती है, बच्चों ने क्या बिगाड़ा है? देवदास ने पूछा भी, 'बा, बापू...?' मन ही मन सोचा बच्चे से कुछ कहना भी मुश्किल और सहना भी मुश्किल। जब अपनों को फिक्र नहीं तो दूसरों को क्या होगी। मैं ही गलत हूं जो दूसरों की फिक्र करती थी।

घर पहुंची तो मोहनदास ने रामदास के हाथ में पट्टी और मणिलाल का अंगूठा बंधा देखा तो चौंक पड़े। उनके चौंकने की पतिक्रिया कस्तूर में भी हुई। उन्होंने चिन्तित स्वर में पूछा, 'यह क्या हुआ?'

कस्तूर की रुलाई फूट पड़ी। उसमें दुःख ही नहीं था बल्कि असहायता और असमर्थता के अलावा पछतावा भी था।

मोहनदास ने तुरंत रामदास का हाथ हिला-डुलाकर देखा। वह कराह उठा। फिर मणिलाल का बंधा हुआ अंगूठा खोला। वह बिलबिला गया। मोहनदास जोर से चिल्लाये, 'तुम बच्चों को भी ठीक से नहीं देख सकी।'

कस्तूर ने एक क्षण सोचा फिर कहा, 'तुमने ठीक कहा, आप तो यहां बैठे थे। तीन बच्चों के साथ मां की स्थिति समझना-समझाना आसान नहीं।' वासदेव भाई चुप थे। उन्होंने अपना परिचय देते हुए पूरी बात ब्यौरेवार बतायी। बोले, 'मैं आपको जानता हूं, आपसे मिलने की इच्छा थी और दो अस्वस्थ बच्चों के साथ कस्तूरबेन को अकेले नहीं भेजना चाहता था।' मोहनदास चुपचाप सुनते रहे। उनके चेहरे से लग रहा था, उन्हें अपने असहिष्णुता का अहसास हो रहा है। वासदेव भाई जब चले गये तो कस्तूर का गुस्सा फूट पड़ा, 'तुम तो स्टेशन तक नहीं आये। तुम समझते हो कि तीन-तीन छोटे बच्चों का हजारों मील जहाज में लेकर आना इनाम दिया।' मोहनदास चुप रहे। उनके पास शायद कोई जवाब नहीं था।

कस्तूर से पूछा, 'रामदास के हाथ पर मिट्टी की पट्टी चढ़ा दूं?' कस्तूर ने हां कर दी। फिर मणिलाल की बारी आयी। उन्होंने उसके अंगूठे का जख्म पोटेशियम परमैगनेट से धोकर उस पर भी मिट्टी की पट्टी बांध दी। तीन चार दिन बाद रामदास के हाथ की हड्डी जुड़ने लगी थी। मणि का जख्म भी भर रहा था।

मोहनदास का कार्यक्रम निश्चित रहता था। वे सबेरे ही निकल जाते थे। कभी साइकिल पर कभी पैदल। रात्रि भोजन के समय लौटते थे। अक्सर उनके साथ उनके सहयोगी होते थे। मोहनदास को उन सबके साथ खाना अच्छा लगता था। कस्तूरबा उसी अंदाज से खाना बनाती थी। रात में अक्सर देर तक काम करते थे। 'इंडियन ओपिनियन' के लिए संपादकीय और लेख लिखकर डरबन भेजने होते थे। वे अपने कमरे में ही सोते थे। कभी जब मन होता था तो कस्तूर के बिस्तर में जा घुसते थे। वे अपनी संतुष्टि के लिए आते थे। यह कस्तूरबा जानती थी। वह यथासंभव सहयोग करती थी। वह यह समझती थी कि वह उनके संसार का हिस्सा न पहले थी और न अब है। वह शांत रहती थी।

वे यह मानते थे कि 'इंडियन ओपिनियन' की पाठक संख्या बढ़ाना जरूरी है। उसे बंद करना भारतीयों का अपमान होगा तथा भारतीयों व सरकार के बीच का संपर्क और संवाद टूट जायेगा। इससे आंदोलन को नुकसान पहुंचेगा। उसे जीवित रखने के लिए हर महीने वे 75 पौंड की सहायता अपने पास से देते थे। एक दिन उन्होंने घर कहलाया कि वे रात में घर नहीं आयेंगे। उन्होंने ऐसा पहले कभी नहीं किया था। देर से ही सही पर आते जरूर थे। वह समझ नहीं पा रही थी आखिर उन्होंने अपना नियम क्यों तोड़ा। किससे पूछती, कोई तरीका नहीं था। वह बच्चों को खाना खिलाकर सोने चली गयी। जब भी रात को आंख खुलती थी, वही सवाल दिमाग में घूमने लगता था, उन्होंने ऐसा क्यों किया? वैसे भी गोरे उन्हें पसंद नहीं करते थे। जब सबेरे मोहनदास नहाने और कमर सीधी करने आये तो सिर्फ इतना बताया कि भारतीय समुदाय के लोग किसी संकट में फंस गये थे।

मोहनदास जब नहा चुके तो कस्तूरबा ने फिर पूछा, तो बताया, 'मजदूर बस्ती में काली प्लेग फूट पड़ी है, तेईस मरीज भर्ती हैं। वहां एक गोदाम को साफ करके अस्थाई व्यवस्था करनी पड़ी तब मरीजों को रखा गया। बस और न बढ़े।' उन्होंने यह बात कस्तूर को पहले इसलिए नहीं बतायी थी कि कहीं वह प्लेग का नाम सुनकर परेशान न हो जाये। लेकिन वे स्वयं चिन्तित और परेशान थे। निमोनिक प्लेग बस्ती में तेजी से फैली थी। सोने की खानों में काम करने वाले अफ्रीकी मजदूरों में पहले आयी थी। वहां से भारतीय मजदूरों की बस्ती में आयी थी। मदनजीत ने एक बंद घर का ताला तोड़कर मरीजों को तत्काल बस्ती से अलग कर दिया था। उसके बाद मोहनदास को सूचना भिजवायी थी।

मोहनदास ने इतना ही कहा, 'पिछली रात बड़ी भयानक थी। आज देखो कैसी गुजरे? मुझे तुरंत जाना होगा। पता नहीं वहां क्या हो रहा होगा?'

कस्तूरबा न डरी और न पति को जाने से रोका। बल्कि अप्रत्याशित रूप से कहा, 'मैं भी तुम्हारी सहायता के लिए साथ चलूंगी।'

मणिलाल सुन रहा था, वह तुरंत बोला, 'मैं भी उनको सेवा करने चलूंगा।' उन दोनों ने उसकी बात पर ध्यान नहीं दिया। लेकिन मोहनदास ने चकित होकर पत्नी की तरफ देखा और केवल एक शब्द कहा—नहीं। कस्तूरबा का चेहरा उतर गया। चेहरे पर मायूसी देखकर उन्होंने सेवा का दूसरा कम खतरे का मार्ग सुझाया, 'अगर तुम सेवा करना चाहती हो तो भारतीय मजदूरों की बस्ती में जाकर महिलाओं को तीन बातें समझाओ—कैसे स्वस्थ रहा जाये, सफाई के नियम और प्लेग के लक्षण बताओ, दूसरों को उससे कैसे सावधान किया जाये, यह समझाओ।'

कस्तूर को अनजान घरों में घुसकर बिना मांगी सलाह देने में असुविधा का अहसास हुआ। फिर स्वयं ही सोचा, ऐसे खतरे के समय, बीमारी आने से पहले, उससे बचाव करना ज्यादा कारगर होगा। उसने मन ही मन यह सेवा करने का निश्चय कर लिया। वह दोनों छोटे बच्चों को मणिलाल की देख-रेख में छोड़कर मोहनदास के साथ बस्ती में गयी। अपने दम पर बस्ती की औरतों से मिलकर सब बातें समझायीं। जो महिलाएं गुजराती नहीं समझती थीं, उन्होंने भी कस्तूरबा की इस कर्म-भावना का स्वागत किया। कुछ एक महिलाओं को प्रेरित किया कि जिस गोदाम में उन मरीजों को रखा गया है, वहां जाकर सफाई और फर्श की घिसाई करें। कस्तूरबा और कुछ महिलाएं बस्ती में घर-घर गयीं और गद्दे, चादर, तकिये, बरतन और पैन्स (पेशाब करने का बरतन) आदि इकट्ठे किये। जब तक मरीजों की सुविधा के लिए आवश्यक उपस्कर जमा नहीं हो गया तब तक वह घर नहीं गयी। इस बीच बच्चों की चिन्ता सताती रही। मणिलाल में अपना विश्वास मजबूत करती रही। समझदार और जिम्मेदार है। एक के बाद एक मरीज मर रहे थे। संकट का समय था। म्युनिसिपेलिटी द्वारा भेजी गयी एक गोरी नर्स आने के बाद कुछ बाद ही प्लेग का शिकार हो गयी थी। मौत का नंगा नाच हो रहा था।

प्लेग का कहर समाप्त नहीं हुआ था कि एक नयी आपत्ति टूट पड़ी। जोहान्सबर्ग की म्युनिसिपेलिटी ने घोषणा की कि चूंकि प्लेग भारतीयों की बस्ती में फूटी है इसलिए बस्ती को जला दिया जाये। हालांकि प्लेग सोने की खान के मजदूरों में पहले फूटी थी। म्युनिसिपेलिटी ने कभी बस्ती की सफाई के लिए किसी तरह की सहायता नहीं की थी। उन्होंने बस्ती को नष्ट करने का नोटिस नहीं दिया था। मोहनदास इस अन्यायपूर्ण इकतरफा आदेश से आहत थे। वे स्वयं बीमारियां फैलाने वाली गंदगी के उन्मूलन के लिए लगातार आवाज उठाते रहे थे। बस्ती वालों को घरों से निकालकर जबरदस्ती कैम्पों में भेज दिया गया और बस्ती में आग लगा दी गयी। मोहनदास ने इस ज्यादती के खिलाफ अपने पैसे से मुकदमा किया और सत्तर में उनहत्तर मामलों में ट्रिब्युनल ने मुआवजा मजदूरों को दिलवाया। अदालत ने वकील की जो फीस तय की, मुआवजा मिलने पर उसकी आधी फीस ली। वह आधी फीस भी 'इंडियन ओपिनियन' को दे दी।

इस संकट के समय मोहनदास पर जिन लोगों ने सबसे अधिक प्रभाव डाला उनमें कस्तूरबा भी थी। मोहनदास ने पहली बार जाना कि ऐसी जानलेवा मुसीबत में महिलाओं के साथ काम करने और उन्हें प्रेरित करने की कस्तूरबा में अद्भुत शक्ति है। कस्तूरबा ने उस मुसीबत के समय अपने मन की सहानुभूति और योग्यता को सामने लाने में जरा-सी भी संकोच नहीं किया था। वह अपने प्रति ईमानदार ही नहीं थी बल्कि उस अनायास उपजे संकट का सामना करने के लिए भी कटिबद्ध थी।....*क्रमशः अगले अंक में*

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष का पत्र जिलाधिकारी, वाराणसी के नाम

ज्ञात्व्य है कि सर्व सेवा संघ के साधना केन्द्र, वाराणसी परिसर में जिला प्रशासन का अनाधिकृत हस्तक्षेप नया नहीं है। 10 एवं 11 जनवरी, 2018 को सर्व सेवा संघ की बिना सहमति के वाराणसी जिला प्रशासन द्वारा एक बहुराष्ट्रीय कंपनी 'वाटर हाऊस कूपर्स' को पुलिस के बल पर अनाधिकृत प्रवेश दिलाया गया, जो देश के कानून का खुला उल्लंघन तो है ही, यह उस राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के प्रति असम्मान को दर्शाता है जिनकी तस्वीर पूरे देश का प्रशासन अपने कार्यालयों में लगा रखी है। प्रशासन का यह कृत अत्यन्त अशोभनीय और निन्दनीय है।

इस पूरे मसले पर सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष भाई महादेव विद्रोही ने 13 जनवरी, 2018 को वाराणसी जिला कलेक्टर को एक पत्र लिखा है, जिसमें सर्व सेवा संघ की पूरी स्थिति को स्पष्ट किया गया है, यहां अविकल प्रकाशित किया जा रहा है ताकि केन्द्र/राज्य सरकार, आम जन तथा समाज सेवा में लगे सभी गांधीजन भी पूरी स्थिति से अवगत हो सकें। **–सं.**

सेवा में,

कलेक्टर एवं जिलाधिकारी

वाराणसी

विषय : आईएमएस, काशी के संबंध में बुलाई गयी 15.01.2018 की बैठक

संदर्भ : आपका पत्रांक 6603/एस टी कैम्प-2017 दि. 13 जनवरी, 18

महोदय,

जयजगत!

आपका उपरोक्त संदर्भ का पत्र 13 जनवरी, 2018 की रात मिला, उस समय मैं यात्रा पर था।

इतने कम समय की नोटिस पर मेरा आज की बैठक में वाराणसी पहुंच पाना संभव नहीं है। हमारे पहले से भी कई कार्यक्रम निर्धारित हैं, जिसमें मेरी उपस्थिति अनिवार्य है। *अतः आज की बैठक में शामिल नहीं हो पाऊंगा, क्षमा करेंगे।*

हम निम्न तथ्यों की ओर आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहते हैं :—

1. सर्व सेवा संघ *गांधी-विचार का राष्ट्रीय संगठन है। देश के 26 प्रदेशों और उसके जिलों में सर्व सेवा संघ कार्यरत है।* हम देश के विभिन्न हिस्सों में सामाजिक आंदोलन एवं सघन क्षेत्रों में निरंतर सेवा और रचनात्मक कामों में लगे हैं।

2. *विभिन्न राज्य भूदान अधिनियमों के अनुसार सर्व सेवा संघ की अनुशंसा पर ही राज्य भूदान यज्ञ बोर्डों का गठन होता है।*

3. *सर्व सेवा संघ की स्थापना के लिए राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने स्वयं अपने हस्ताक्षर से एक राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाया था।* पर, इससे पहले ही उन्हें हमसे छीन लिया गया। पूज्य बापू चाहते थे कि *रचना एवं निर्माण में लगीं सभी राष्ट्रीय संस्थाएं एक हो जायें और सबकी सम्मिलित शक्ति नये भारत के पुनर्निर्माण* में लगे।

4. राष्ट्रपिता की हत्या के बाद 13-15 मार्च, 1948 को सेवाग्राम में एक राष्ट्रीय सम्मेलन आचार्य विनोबा भावे के नेतृत्व तथा देशरत्न डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में आहूत किया गया। इस सम्मेलन में तत्कालीन शीर्षस्थ राष्ट्रीय नेतृत्व यथा—*पं. जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल, डॉ. जाकिर हुसैन, लोकनायक जयप्रकाश नारायण, चक्रवर्ती राजगोपालाचारी आदि* उपस्थित थे। इन महानुभावों ने *सर्वसम्मति से 'सर्व सेवा संघ' (अखिल भारत सर्वोदय मंडल) का गठन* किया। इस वर्ष *सर्व सेवा संघ के 70 वर्ष* पूरे हो रहे हैं। इस उपलक्ष्य में हम अगले महीने सेवाग्राम (महाराष्ट्र) में एक *अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन* आयोजित कर रहे हैं, जिसमें दुनिया के विभिन्न देशों के लोग शामिल होंगे। सम्मेलन का उद्घाटन *महात्मा गांधी के पौत्र श्री राजमोहन गांधी* तथा अध्यक्षता *वरिष्ठ गांधीवादी डॉ. एस. एन. सुब्बराव* करेंगे। इस सम्मेलन में करीब चार (4) हजार प्रतिनिधियों के शामिल होने की उम्मीद है।

5. तत्कालीन *रेलमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री* के कार्यकाल में वरिष्ठ सर्वोदय नेताओं—*श्री शंकरराव देव, श्री राधाकृष्ण बजाज तथा श्री सिद्धराज ढड्ढा*—के सक्रिय और सोद्देश्य प्रयत्नों से राजघाट, वाराणसी स्थित वर्तमान में सर्व सेवा संघ परिसर की भूमि भारतीय रेल से सरकार द्वारा निर्धारित मूल्य पर खरीदी गयी। इसके रजिस्ट्री के कागजात सर्व सेवा संघ के पास उपलब्ध हैं।

6. पिछले कुछ समय से यह बात सुनने में आ रही है कि सरकार द्वारा इस भूमि पर किसी हब के निर्माण के लिए डीपीआर तैयार किया जा रहा है। पर, *हमें अभी तक इस संबंध में शासन की ओर से कोई जानकारी नहीं मिली है।*

7. *सर्व सेवा संघ बम्बई पब्लिक ट्रस्ट एक्ट 1950 के अंतर्गत रजिस्टर्ड है।* इस एक्ट के अनुसार संस्था की जमीन किसी और को देने से पूर्व चैरिटी कमिश्नर, महाराष्ट्र की अनुमति आवश्यक है। दिनांक 17 दिसंबर, 2017 को हमारे प्रतिनिधि श्री रमेश पंकज (मंत्री) और श्री विजय कुमार (परिसर संयोजक) ने भी आपसे कहा था कि आपको जो भी कुछ कहना है, उसका विधिवत प्रस्ताव लिखित रूप में सर्व सेवा संघ को भेज दें, ताकि हमारा न्यासी मंडल (BOARD OF TRUSTEES) इसपर विचार कर सके। आपकी भी इसपर सहमति थी और आपने कहा था कि दो-तीन दिनों के अंदर प्रस्ताव सर्व सेवा संघ को भेज दिया जायेगा। परन्तु इस पत्र को लिखने तक हमें आपका कोई प्रस्ताव प्राप्त नहीं हुआ है।

8. *राजघाट, वाराणसी स्थित सर्व सेवा संघ एक ऐतिहासिक महत्त्व की विरासत (हेरिटेज) है,* जहां महात्मा गांधी द्वारा स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान बनायी और चलायी गयी अनेक संस्थाओं का सम्मिलित संघ, गांधी-विचार के प्रचार-प्रसार के लिए प्रकाशन संचालित है। सर्व सेवा संघ प्रकाशन द्वारा संचालित देश के लगभग 72 महत्त्वपूर्ण रेलवे स्टेशनों पर *सर्वोदय बुक*

स्टाल गांधी विचार के प्रचार-प्रसार का कार्य कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त *शांति सेना, प्राकृतिक चिकित्सा, बालवाड़ी, कार्यकर्ताओं का राष्ट्रीय प्रशिक्षण और सर्वोदय दर्शन का यह एक मूल्यवान केन्द्र है,* जहां देश-विदेश से लोग आते रहते हैं। हमारे परिसर में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, आचार्य विनोबा भावे एवं लोकनायक जयप्रकाश नारायण के जीवन एवं कार्यों से जुड़ी एक प्रदर्शनी भी संचालित है, जिसे पूर्वांचल के विभिन्न विद्यालयों एवं महाविद्यालयों के छात्र तथा नागरिक बड़ी संख्या में देखने आते हैं और प्रेरणा ग्रहण करते हैं।

9. इस परिसर में *लोकनायक जयप्रकाश नारायण* के नेतृत्व में सर्व सेवा संघ द्वारा स्थापित *'गांधी विद्या संस्थान' (The Gandhian Institute of Studies)* है। यह संस्थान गांधी-दर्शन के उच्च अध्ययन एवं शोध का कार्य करता है। इसमें भारत सरकार के समाज विज्ञान अनुसंधान परिषद तथा उत्तर प्रदेश शासन के उच्च शिक्षा विभाग का आर्थिक सहयोग भी मिलता रहा है।

गांधी विद्या संस्थान से संबंधित एक वाद माननीय उच्च न्यायालय, इलाहाबाद में लम्बित है। न्यायालय ने यथास्थिति बनाये रखने का निर्देश दिया है। ऐसी स्थिति में यहां कुछ निर्माण आदि करना न्यायालय की अवमानना होगी।

10. *लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने स्वयं इस परिसर में लम्बे समय तक निवास* किया है। वर्तमान में परिसर में उनकी *प्रतिमा भी स्थापित* है, जिसका अनावरण *भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री चन्द्रशेखर* के कर-कमलों द्वारा हुआ था।

11. ऐतिहासिक *भूदान आंदोलन के प्रणेता आचार्य विनोबा भावे* का यह *साधना स्थल* रहा है। इसलिए इसे *'साधना केन्द्र'* के रूप में जाना जाता है। इस परिसर में जहां आचार्य विनोबाजी ने लम्बे समय तक जिस कुटिया में निवास किया, वह *'शांति कुटी'* के नाम से *आज भी उसी रूप में जीवंत* है।

12. यहां नियमित संवाद कार्यक्रम, प्रशिक्षण कार्यशालाएं, गोष्ठियां और सम्मेलन आदि होते रहते हैं।

13. *यह वही परिसर है,* जहां देश के दूसरे *प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री, आचार्य संत विनोबा भावे, लोकनायक जयप्रकाश नारायण, दादा धर्माधिकारी, राधाकृष्ण बजाज, वेदांत मर्मज्ञ विमला ठकार, सिद्धराज ढड्ढा, ठाकुरदास बंग, आचार्य राममूर्ति जैसी विभूतियां* रही हैं और देश का विभिन्न मौके पर राष्ट्रहित में महत्त्वपूर्ण मार्गदर्शन किया है।

14. यह वर्ष *राष्ट्रपिता महात्मा गांधी एवं माता कस्तूरबा की 150वीं जयंती* का वर्ष है। केन्द्र सरकार, सभी राज्य सरकारें एवं सर्व सेवा संघ इस जयंती को व्यापक पैमाने पर मनाने की तैयारी कर रहा है। अच्छा तो यह होता कि हमारे प्रयासों में उत्तर प्रदेश शासन एवं जिला प्रशासन भी सहभागी होता। पर, हमें दुःख के साथ कहना पड़ता है कि प्रशासन की ओर से जिस योजना पर विचार किया जा रहा है, यदि उसे हमारे परिसर में कार्यान्वित किया जायेगा, तो यह ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व का हेरिटेज नष्ट हो जायेगा। *हम चाहते हैं कि इसके मूल स्वरूप को किसी प्रकार की कोई क्षति नहीं पहुंचे।*

15. 10-11 जनवरी, 18 को बिना हमारी सम्मति के अहिंसा के पुजारी बापू के इस परिसर में वाटर हाउस कूपर्स नाम की बहुराष्ट्रीय कंपनी ने पुलिस के साथ प्रवेश किया। यह कानून का उल्ललंघन तो है ही साथ ही बापू के प्रति असम्मान को भी दर्शाता है।

16. *आपके संज्ञान में यह भी होगा कि हमारे परिसर के बिलकुल बगल में करीब 15-20 मीटर के अंतर पर भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण द्वारा संरक्षित 'लाल खां का रौजा' भी है। पुरातत्त्व विभाग के नियमों के अनुसार यहां कोई नया निर्माण नहीं हो सकता है।*

17. जैसा कि हमने आपको पहले सूचित किया था, काशी रेलवे स्टेशन एवं हमारे परिसर के बीच से राष्ट्रीय राजमार्ग (G T Road - शेरशाह शूरी मार्ग) गुजरती है। अतः *भौगोलिक दृष्टि से भी सड़क पार कर हमारे परिसर में तथाकथित परियोजना को कार्यान्वित करना किसी भी रूप में उपयुक्त नहीं लगता है।*

18. हमें आपको सूचित करते हुए प्रसन्नता हो रही है कि सर्व सेवा संघ के इस परिसर को हम *काशी की गरिमा के अनुरूप* एक अंतर्राष्ट्रीय गांधी विरासत के रूप में समृद्ध एवं अद्यतन करने जा रहे हैं। इसमें अंतर्राष्ट्रीय स्तर का एक गांधी संग्रहालय होगा, जिसमें महात्मा गांधी की अस्थियां, लंदन से निलामी द्वारा खरीद की गयी बापू के खून से सनी मिट्टी, बापू से संबंधित अनेक दुर्लभ वस्तुओं का संग्रह, देश के विभिन्न भागों से प्राप्त विभिन्न प्रकार के चरखों की प्रदर्शनी, अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप अपने पुस्तकालय एवं प्रकाशन का संवर्धन, गांधी-दर्शन, अहिंसा और भारत के स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास और शोध केन्द्र, महात्मा गांधी की कल्पना के अनुरूप 300 देशी गायों की गौशाला आदि स्थापित करना है।

वर्तमान में चल रही प्रवृत्तियों एवं इन आगामी योजनाओं को कार्यान्वित करने हेतु ही सर्व सेवा संघ के पास जो जमीन है, वह अपर्याप्त है। अतः किसी अन्य कार्य के लिए अपनी जगह दे पाना संभव नहीं है।

आशा है आपको भी हमारी इन योजनाओं से गौरव की अनुभूति होगी और हमें आपका सहयोग प्राप्त होगा।

हम एक बार पुनः आपसे अनुरोध करते हैं कि उपर्युक्त सभी तथ्यों पर व्यापक विचार करेंगे एवं विकास के नाम पर ऐसा कोई कदम नहीं उठायेंगे, जिससे इस *ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक और पर्यावरणीय महत्त्व के हेरिटेज को किसी प्रकार का कोई नुकसान पहुंचे और इसकी गरिमा आहत हो।* धन्यवाद! ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा प्रिन्टेक, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया, वाराणसी से मुद्रित। प्रधान संपादक : बिमल कुमार / संपादक : अशोक मोती।